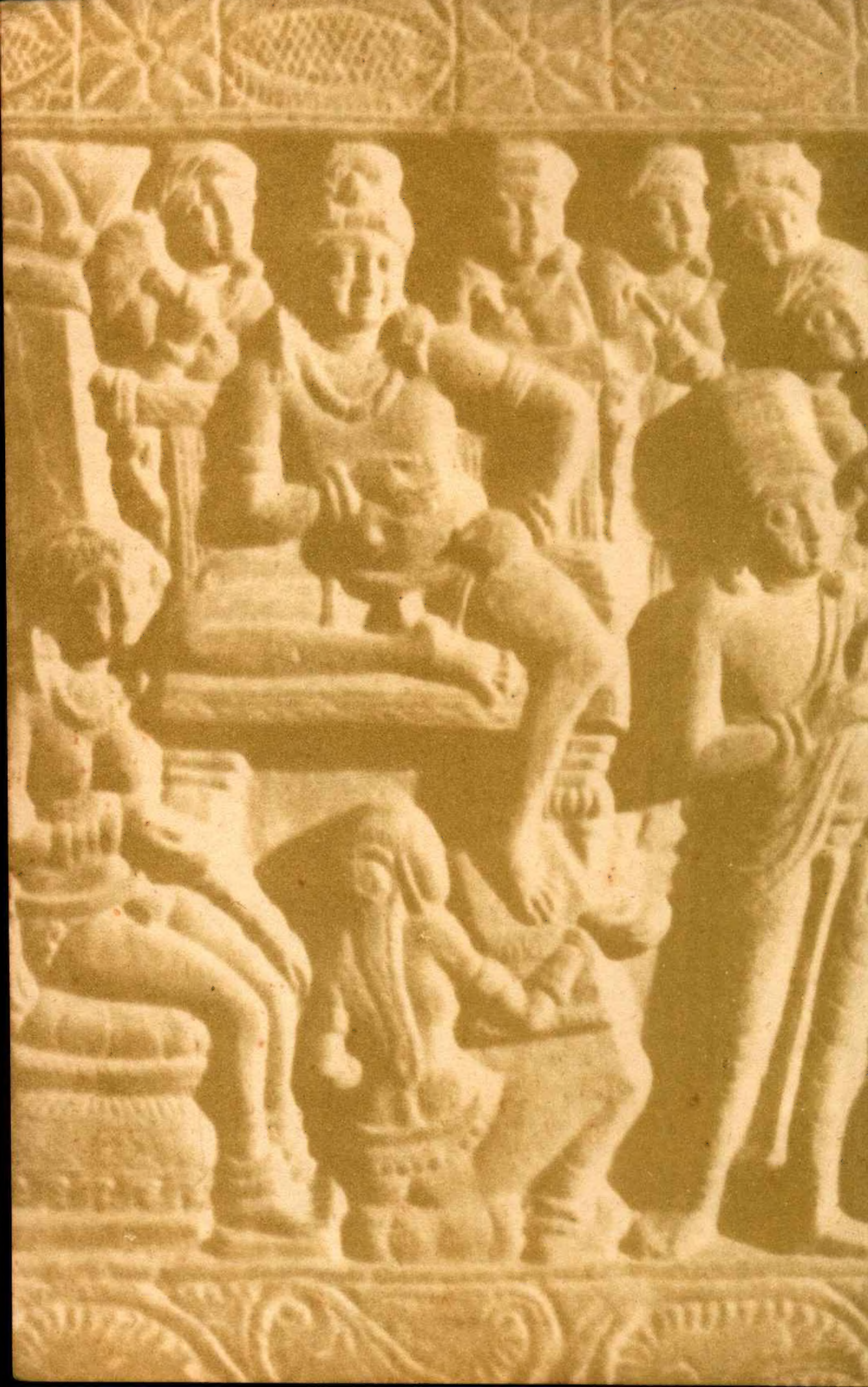


ज़िन्दा कौल

अर्जुननाथ रैना



भारतीय
साहित्य के
निर्माता





अस्तर पर छपे मूर्तिकला के प्रतिरूप में राजा शुद्धोदन के दरबार का वह दृश्य है, जिसमें तीन भविष्यवक्ता भगवान बुद्ध की माँ—रानी माया के स्वप्न की व्याख्या कर रहे हैं। नीचे बैठा मुंशी व्याख्या का दस्तावेज़ लिख रहा है। भारत में लेखन-कला का यह संभवतः सबसे प्राचीन और चित्रलिखित अभिलेख है।

नागार्जुनकोण्डा, दूसरी सदी ई०

सौजन्य : राष्ट्रीय संग्रहालय, नयी दिल्ली

भारतीय साहित्य के निर्माता

ज़िन्दा कौल

लेखक

अर्जुननाथ रैना

अनुवादक

अनिल सिन्हा



साहित्य अकादेमी

Zinda Kaul : Hindi translation by Anil Sinha of A. N. Raia'ns monograph in English. Sahitya Akademi, New Delhi (1986), Rs. 5.

प्रथम संस्करण : 1986

साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय
रवीन्द्र भवन, 35, फीरोज़शाह मार्ग, नयी दिल्ली 110 001

क्षेत्रीय कार्यालय
ब्लाक V-बी, रवीन्द्र सरोवर स्टेडियम, कलकत्ता 700 029
29, एलडाम्स रोड (द्वितीय मंज़िल), तेनामपेट, मद्रास 600 018
172, मुम्बई मराठी ग्रन्थ संग्रहालय मार्ग, दादर, बम्बई 400 014

मूल्य
पाँच रुपये

मुद्रक
जे. सामन्ता मशीनरी कम्पनी प्रा. लिमिटेड (प्रेस डिवीजन)
14–ए, कमला नगर, दिल्ली 110 007

विषय-सूची

1
व्यक्तित्व

लक्ष्मण पंडित एक ग़रीब लेकिन धर्मपरायण कश्मीरी ब्राह्मण थे। वे श्रीनगर के शेहलीटेंग मुहल्ले में रहते थे। शेहलीटेंग झेलम नदी के पूर्वी कछार पर स्थित उपत्यका है। अब यह मुहल्ला झेलम नदी पर बने प्रसिद्ध पुल हब्बा कदल के ज्यादा नज़दीक है।

लक्ष्मण पंडित मिट्टी और फूस की एक कच्ची झोपड़ी में रहते थे और उनकी माँ घर की देखभाल करती थीं। वे अपनी सरलता और निर्लिप्तता के लिए प्रसिद्ध थीं और लक्ष्मण पंडित संतोष, धीरज और साहस के लिए।

अगस्त १८८४ में लक्ष्मण पंडित को एक बेटा हुआ, जिसका नाम रखा गया ज़िन्दा (आयुष्मान)। पुत्र जब तीन वर्ष का था, तभी उसकी माँ का स्वर्गवास हो गया। धीर, गंभीर और शांत स्वभाव के लक्ष्मण पंडित पर पत्नी के देहान्त का गहरा प्रभाव पड़ा। लेकिन उन्होंने यह निश्चय किया कि माँ के अभाव में भी हर क़ीमत पर वे अपने लड़के को समुचित शिक्षा देंगे।

इस प्रकार ज़िन्दा कौल के जीवन की शुरूआत प्यार, संतोष और निर्लिप्तता के वातावरण में हुई। उनके होठों पर हमेशा एक शान्त मुस्कान खेलती रहती थी।

उन दिनों वहाँ कोई स्कूल नहीं था। केवल मक़तब थे, जिन्हें उनके शिक्षक (अरखुन्द) अपने घरों में चलाया करते थे। श्रीनगर के पुराने मक़तबों में बालक कौल जान का मक़तब भी एक था। ज़िन्दा कौल ने यहीं से अपनी पढ़ाई शुरू की। फ़ारसी का पहला पाठ 'करीमा' पढ़ने तक उनकी शिक्षा फ़ारसी लिपि में हुई। वे एक तेज़ और मेहनती छात्र थे।

सन् १८९२ में कश्मीर में एक महामारी फैली, जिसने वहाँ तबाही मचा दी, कितने ही लोग उसमें मौत के घाट उतरे। असंख्य घर वीरान हो गये। उनमें ताले डालकर चाबियाँ पास के थाने में जमा कर दी गयीं। इसी महामारी के शिकार हुए बालक कौलजान। उनकी मृत्यु के बाद उनका मक़तब भी बन्द हो गया साथ ही ज़िन्दा कौल की पढ़ाई की समस्या पैदा हो गयी।

शेहलीटेंग के पास ही गुंड-ग्रहलमर में पंडित दामोदर अपना स्कूल चलाते थे। स्कूल काफ़ी प्रसिद्ध था। वह फ़ारसी के ज्ञाता, विद्वान शिक्षक थे। अब जिन्दा कौल की पढ़ाई यहीं शुरू हुई।

स्कूल में फ़ारसी की अनेक पांडुलिपियाँ भी थीं जिन्हें अपने खाली समय में जिन्दा कौल पढ़ा करते थे। वे अक्सर उन्हें उलट-पलट कर देखते रहते। कई बार उनके शिक्षक उन्हें पांडुलिपियों को सुधारने का काम भी दिया करते थे।

एक दिन अचानक पंडित दामोदर ने जिन्दा कौल की कापी में फ़ारसी की कुछ पंक्तियाँ लिखी देखीं। पंक्तियाँ इस प्रकार थीं—

"हे ईश्वर।
मुझे ज्ञान का ऐसा वरदान दो
कि दूसरों की भावनाओं को जान सकूँ।"

पंडित ने जिन्दा के इस प्रयास के लिए उन्हें डाँटा और कहा कि आगे वे कविता रचने का प्रयास न करें। उन्हें यह पसन्द नहीं था कि किशोरावस्था में ही कोई छात्र कविता पढ़े-लिखे और फ़ारसी की पांडुलिपियाँ अपने घर ले जाए। लेकिन हुआ यह कि छोटी उम्र में ही जिन्दा कौल में बौद्धिक परिपक्वता आनी शुरू हो गई। अपने शिक्षकों से बातचीत करते समय वे फ़ारसी के जिन मुहावरों का प्रयोग करते थे, उनसे उनकी बुद्धिमत्ता झलकती थी और उनके शिक्षक आश्चर्य में पड़ जाते थे। इसी अवस्था से उन्होंने उर्दू में लिखना शुरू किया। और जब उनकी पहली कविता प्रकाशित हुई तो उन्हें प्रसिद्धि भी मिली। कविता थी—

"क्या है वह जो खुशी देता है
और समाप्त करता है द्वन्द्व
वह एकता और सहयोग है—
जो मनुष्य के हृदय में भरा है।"

इस समय तक कश्मीर पश्चिमी शिक्षा पद्धति से प्रभावित होने लगा था। निम्न प्राइमरी कक्षाओं में अंग्रेजी पढ़ाना शुरू कर दिया गया था। पढ़ाई में मन लगाने और कुशाग्रता के कारण जिन्दा कौल को उस स्कूल में दाखिला मिल गया, जहाँ लाला सीताराम प्रधानाचार्य थे। वे अंग्रेज़ी पढ़ाते थे। जिन्दा कौल के लिए वास्तव में यह पहला व्यवस्थित स्कूल था। पढ़ाई के प्रति जिन्दा कौल के उत्साह और लगन को देखकर इस स्कूल के शिक्षक बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने पाठ्य पुस्तकें और कापियाँ आदि देकर जिन्दा कौल की सहायता की।

लेकिन जिन्दा कौल की पढ़ाई सुचारू रूप से न चल सकी। उन्हें पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ी क्योंकि पिता ने उनके लिए एक नौकरी ढूँढ़ दी। विदेशियों के लिए एक फैशनेबुल बाजार-बन्ड पर उनके लिए नौकरी का

प्रबन्ध किया गया। यह दुकान एक फोटोग्राफ़र की थी। दुकानदार को एक ऐसे आदमी की तलाश थी, जो अंग्रेज़ी लिख बोल सके।

जिन्दा कौल को यहाँ पश्चिमी संस्कृति की कुछ ऐसी चीज़ें मिलीं जो उन्हें बहुत पसन्द आयीं। जैसे साफ़-सुथरा परिवेश, काम में दक्षता और समय की पाबन्दी। समय का महत्त्व उन्हें सबसे अच्छा लगा।

दिन भर वे अंग्रेज़ी के पुराने अखबार पढ़ते रहते। लेकिन कुछ समय के बाद उन्हें ऐसा लगा कि यहाँ वह अपनी ज़िन्दगी बर्बाद कर रहे हैं। काफ़ी सोच-विचार के बाद उन्होंने यह काम छोड़ दिया। और फिर से पुराने स्कूल में नाम लिखा लिया। सन् १६०२ में उन्होंने यहाँ से प्रावीण्य के साथ माध्यमिक परीक्षा पास की। और इसके बाद महालेखाकार के कार्यालय में 'आकूतुन्दी' की हैसियत से एक पद पर उनकी नियुक्ति हुई। इसके लिए उन्हें प्रतियोगी परीक्षा देनी पड़ी, जिसमें वे प्रथम आये। उन दिनों इस पद के लिए सभी लालायित रहते थे क्योंकि यह पद अत्यन्त लाभ का माना जाता था। इस प्रकार जिन्दा कौल की एक सामाजिक प्रतिष्ठा शुरू हुई। उन्हें सभी जानने लगे। लेकिन इस काम में भी उनका मन नहीं लगा। फ़ाइलों में जो भी लिखना पढ़ना होता था, वह उनके लिए मानसिक गतिरोध के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। उन्हें निष्क्रियता का तीव्र एहसास हुआ।

तभी श्रीनगर के प्रथम कॉलेज के अंग्रेज़ प्रिंसिपल मिस्टर मूर से उनका परिचय हुआ। उन्होंने ज़िन्दा कौल को अपने कॉलेज में अध्यापक के रूप में नियुक्त किया। वे उनके अनुवादों से भी बहुत प्रभावित हुए।

मिस्टर मूर ज़िन्दा कौल को 'पहले ही विकसित एक जीवात्मा' कहते थे—एक ऐसी जीवात्मा—जिसके अनुवाद का हर प्रयास निश्चित तौर पर बहुत ही अच्छा होता है।

१६०८ में ज़िन्दा कौल ने एन्ट्रेन्स की परीक्षा पास की और १६१५ में अंग्रेजी, फ़ारसी और इतिहास विषयों के साथ उन्होंने स्नातक की परीक्षा पास की।

शिक्षण कार्य में उनकी गहरी रुचि थी। शिक्षाशास्त्र में 'सर्वोत्तम शिक्षक' के लिए स्नातक की डिग्री लेने ज़िन्दा कौल लाहौर के लिए रवाना हुए। लेकिन वहाँ के प्रिंसिपल के रूखे और क्रोधी व्यवहार के कारण उन्हें गहरा सदमा पहुंचा। उनके संवेदनशील मस्तिष्क पर इसका ऐसा प्रतिकूल प्रभाव पड़ा कि पढ़ाई बीच में ही छोड़कर वे श्रीनगर वापस चले आए। मिस्टर मूर के कालेज के पुरातत्त्व विभाग में वे १६२२ तक प्राध्यापक रहे। इस विभाग को उन्होंने अपना अमूल्य योगदान दिया। लेकिन इन्हीं दिनों उनके जीवन में एक दुखद घटना घटी। उनकी पत्नी का देहान्त हो गया। उन्होंने अत्यंत दुःख और आंतरिक वेदना के साथ लिखा—

"उसके साथ क्या
मैं मर नहीं सकता था।
लेकिन क्या मनुष्य अपनी इच्छा को
पूरा करने के लिए स्वतंत्र है ?

इस स्थिति के बाद इस "विकसित जीवात्मा" को एकांतवास ही सबसे अच्छा लगा। उन्होंने अपने को एक अकेले कमरे में बन्द-सा कर लिया। कमरे में उनकी सारी चीजें यथास्थान पड़ी रहती—मिट्टी के पात्र वाली स्याही की दवात भी उनकी उस छोटी, ढलवाँ मेज़ पर झुकी रहती, और जिसके सामने झुककर वे लिखते-पढ़ते थे।

इसी समय उनका बड़ा लड़का भी उन्हें दुःख के अथाह सागर में छोड़कर विदा हो गया। अब उनके सामने कुछ भी नहीं था, सिवा दुखद कविता के। इसी समय उन्होंने अपने सबसे करुण व वेदनापूर्ण काव्य की रचना की। वे अपनी भावनाओं को सुस्पष्ट कर सकें इसलिए उन्होंने कश्मीरी भाषा में इन कविताओं की रचना की। इसके बाद उन्होंने कश्मीरी कविताएँ लिखनी शुरू कीं। उनकी ऐसी वेदनापूर्ण रचनाओं का उत्कर्ष मिलता है उनकी प्रसिद्ध कविता "वहिदे मनुष" (मनुष्य रो लेता) में।

प्रो. जे. एल. कौल ने उनकी इस कविता के बारे में लिखा है कि पीड़ा की जैसी गहरी अभिव्यक्ति इस कविता में हुई है, वह अद्भुत है। उन्होंने इस कविता का अनुवाद भी किया और कहा कि ज़िन्दा कौल की यह कविता उनके व्यक्तिगत व आत्मिक दुःख की एक ऐसी कविता है, जिसमें मानव मन की असहायता को अतीन्द्रिय ऊँचाई मिलती है। गहरी अनुभूति के बाद ही इस सूक्ष्म काव्यात्मक परिणति को महसूस किया जा सकता है। कश्मीरी कविता में ऐसे उदाहरण विरल है। जिन्दा कौल भावनाओं को उस ऊँचाई पर ले जाते हैं, जहाँ जगत की अंतिम वास्तविकता के दर्शन होते हैं और यह अंतिम वास्तविकता ही परमानन्द है।

इस पुण्यात्मा के अंतिम दिन अवसाद में बीते। जीवन के अंतिम दिनों में वे उदास रहने लगे। स्वभाव में एक रूखापन आ गया। शांत रहना उन्हें पसन्द आने लगा। अपने भूरे मोटे कम्बल में लिपटे धीमी और मधुर आवाज़ में वे 'ओम' 'ओम' जपते रहते। वे प्रातःकाल ही जग जाते और अपने बिस्तर पर बुद्ध की मुद्रा में अपने छोटे और मुलायम हाथों को घुटनों पर रखकर सीधे बैठ जाते। किसी प्रकार का तेवर नहीं, घबराहट नहीं न किसी प्रकार की भाग-दौड़! लगता था, उनकी शांत और निर्विकार मुद्रा के पास आकर समय भी अपनी गति भूल जाता था। उनके चेहरे पर जो नैसर्गिक मुस्कान और भाव दीखता था, उससे सहज ही उनकी गंभीरता झलकती थी। इस गंभीरता और

साधना के बीच ही वे आगंतुकों का स्वागत भी करते। अपनी असुविधाओं का ख्याल किए बिना अपने यहाँ आए लोगों का मन बहलाव करने में उन्हें खुशी होती। वे इस प्रकार मिलते जैसे दिन भर के लिए उनका अपना कोई कार्य-क्रम ही न हो। उनका यह सहनशील और विनम्र व्यक्तित्व उनकी घरेलू ज़िम्मे-दारियों और चिंताओं से ऊपर उठकर ही निर्मित हुआ था।

अपने जीवन में उन्होंने केवल जम्मू और कश्मीर राज्य के तत्कालीन प्रधानमंत्री बक्शी गुलाम मुहम्मद और उन्हीं की तरह एक महान व्यक्तित्व पंडित ताराचंद वज़ीर का अनुग्रह स्वीकार किया। कुछ समय तक ज़िन्दा कौल जम्मू में तवी नदी के किनारे पंडित ताराचन्द वज़ीर के साथ रहे। यह अप्रैल की एक सुबह की घटना है। मुँह धोने के लिए दतवन तोड़ रहे थे। वहाँ थोड़ा अंधेरा-सा था। अचानक उनकी बाँहों में एक विषैला साँप लिपट गया। हमेशा की तरह ज़िन्दा कौल इस समय भी अविचलित रहे। बहुत धीरे से वे इस प्रकार हिले कि साँप के आराम में किसी प्रकार की बाधा न पड़े। उन्होंने ऐसा किया कि साँप उनकी बाँहों से रास्ता बनाता आगे निकल जाये या बाँहों में जिस प्रकार एक शिशु आराम पाता है, उस प्रकार उसे आराम महसूस हो। इस दृश्य को देखकर चारों तरफ़ चीख-पुकार मच गयी लेकिन ज़िन्दा कौल बिल्कुल शांत, स्थिर और अविचलित भाव से बैठे रहे। सबके लिए यह एक रोमांचक और आश्चर्यजनक दृश्य था। साँप उनकी बाँहों से होता हुआ निकल गया।

सन् १९५६ ई० में साहित्य अकादेमी ने उनकी कश्मीरी कविताओं के लिए पाँच हज़ार रुपये का पुरस्कार प्रदान किया। इस समय तक कश्मीरी कविता में ज़िन्दा कौल का एक महत्त्वपूर्ण स्थान बन चुका था।

ज़िन्दा कौल के अंतिम दिन बड़ी निराशा में बीते। जीने की इच्छा समाप्त हो गयी थी। ईश्वर उनके लिए एक ऐसा विचार हो गया था, जो पूरे ब्रह्माण्ड में प्रकृति के रूप में व्याप्त था। ईश्वर प्रकृति के रूप में मूर्तिमान हो गया था। उनके लिए यह सब कुछ पवित्र और पूजनीय था। आनन्द ही ब्रह्माण्ड का प्राण था। पीड़ा किसी प्रकार से भी सज़ा नहीं थी बल्कि आत्म-शुद्धि के लिए एक अनुभव थी।

प्यार उनके लिए युवाओं के उष्ण रक्त का आन्दोलित ज्वर नहीं था, जो चुम्बनों में समाप्त हो जाता है बल्कि परितृप्ति और दुःख से पूरे वातावरण से बहुत दूर की चीज़ था। प्यार को प्राप्त करने के लिए कला और कला की समझदारी ही सहायक हो सकती है। इस प्रकार उनके लिए प्यार भौतिक जगत से अलग आध्यात्मिकता तक पहुँचने वाली एक वस्तु था।

ज़िन्दा कौल कहते थे—"जो हमारे बीच नहीं हैं वे वस्तुतः हमसे बहुत दूर नहीं होते। उनके बारे में सोचते ही वे हमारे पास आ जाते हैं।"

एक बार मैंने उनसे पूछा—' क्या वह राग या संस्कार ही है, जो मरने के बाद भी उन्हें जीवित लोगों के पास बनाये रखता है।"

उन्होंने कहा—"विश्व तो एक विचार है, सिद्धान्त है, जो भविष्य के लिए एक स्वप्न हो जाता है।"

ज़िन्दा कौल मानते कि हमारी सहायता के लिए ईश्वर की अनुकम्पा हमेशा वर्तमान रहती है। अनुकम्पा मनुष्य के लिए ईश्वरीय समर्थन है। अच्छे ढंग से प्रयास करने पर ही हम वह सारी सम्पदा पा सकते हैं, जो जीवन के लिए दुर्लभ है। ईश्वर सच्चे कर्म को हमेशा तरफ़ देता है और मनुष्यों को अपनी करुणा प्रदान करता है। हम जितनी ही सच्चाई और निर्लिप्तता से काम करेंगे हम उतने ही दिव्य जीवन के निकट आते जायेंगे। ऐसा होने पर हम यह महसूस कर सकते हैं कि ईश्वर की रहस्यपूर्ण कृपा के बिना कुछ नहीं हो सकता। तभी अहम् भाव समाप्त होता है और इस अंधकारमय दुनिया में सत्य का प्रकाश उद्भासित होता है।

कवियों में प्रायः जीवन-दर्शन के बारे में अपनी-अपनी धारणाएँ होती हैं। वस्तुतः वे धार्मिक कवि, जो रहस्यवादी चिन्तन से ग्रस्त होते हैं, बहुधा अपनी गहन दार्शनिकता के चलते अपनी निश्चित धारणाएँ भी बना लेते हैं।

बहुत दिनों तक आत्मचिंतन करने के उपरांत, उन्होंने अपनी प्रसिद्ध कविता 'अप्रस्तुत' लिखी :—

"किसी पौध को सींचो
नमी मिट्टी में चली जाएगी
इसी तरह प्रेम ईश्वर तक
पहुँच जाता है—
जो इस रहस्य को जानते हैं
वे ही वास्तव में ज्ञानी हैं
और इसे प्रेम का रहस्य कहते हैं
मैं भी वैसा ही कहता हूँ।"

पं० जिन्दा कौल ने न कभी इस बात की चिंता की न ही कोई प्रयास किया कि उन्हें धनी और प्रतिष्ठित व्यक्तियों का साथ मिले। उनका ऐसा एक 'लोक' था, जहाँ से उन्हें हर प्रकार का 'आनन्द' मिलता था। कश्मीरी के सर्वश्रेष्ठ फ़ारसी कवि मुल्ला मुहम्मद ताहिर ग़नी की तरह वे अपने घर में ही ब्रह्म का ध्यान किया करते थे। कवि ताहिर के लिए जिन्दा कौल के मन में अपार श्रद्धा थी।

शायद इसीलिए जिन्दा कौल का लोगों के साथ सामाजिक संपर्क बहुत कम रहा। कुछ ही लोग उनके निकट थे और वे उनके साथ रहने, मिलने-जुलने

में प्रसन्नता का अनुभव करते थे। इस प्रकार ज़िन्दा कौल में एक सीमित व्यक्ति-वाद विकसित हो गया था। उनके पास जाने पर भी शांति का घोर साम्राज्य बना रहता था। मिलनेवालों को ज़िन्दा कौल की आवाज सुनने, बातचीत करने की देर तक प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। कई बार तो कोई व्यक्ति किसी प्रकार की मनोरंजक बात कह कर ही वहाँ का मौन तोड़ता था।

ज़िन्दा कौल को देखने से हमेशा ऐसा लगता था कि उन्होंने समय की गति पर ध्यान दिए बिना चुपचाप बैठे रहने की आदत विकसित कर ली थी। इतिहास के लिए जो चीज़ें मृत प्राय हो चुकी थीं, वैसे अन्ध विश्वासों, उत्पीड़क घटनाओं, शोषण, अनैतिकता और ग़रीबों के दुःख के बारे में वे सोचते रहते थे। लेकिन ऐसा शायद ही कभी होता था कि वे इन चीज़ों के प्रति कुछ कहते हों, कोई संकेत देते हों। ज़िन्दा कौल की धार्मिक भावनाएँ कभी संकीर्ण, रूढ़िवादी या कठोर नहीं रहीं। 'अस्तित्व की एकता' उनके लिए किसी भी मताग्रह से ऊपर थी। हमेशा विनीत रहनेवाले ज़िन्दा कौल पवित्र धार्मिक और बुद्धिमान व्यक्तियों की संगति के आकांक्षी थे। वे 'बचनागम' जैसे कार्यक्रमों में जाते थे जहाँ चारण लोग सुन्दर समूहगान गाया करते और नृत्य करते थे। यह एक ऐसा कार्यक्रम होता था, जहाँ शराब और मधुशाला से अलग हटकर लोग गाने का आनन्द लेते थे और गीत के आशय तक पहुँचने की कोशिश करते थे। उनकी रुचि काव्य में थी। उनके ही शब्दों में :—

'डूबती भावनाओं को
काव्य नया जीवन देता है
हाली और इक़बाल ने
सोयी हुई भारतीय आत्माओं में प्रेरणा भरे
एक सच्चा कवि ईश्वर का ही काम पूरा करता है
उसकी ऊँचाई तक जाना मुश्किल होता है।''

कई ऐसे लेखक थे जिनकी रचनाओं को ज़िन्दा कौल पसन्द करते थे। इमर्सन, भगवानदास, राधाकृष्ण, अरविन्द और नेहरू की रचनाओं को सुनना उन्हें प्रिय था।

बाद में उनमें जीने की इच्छा भी समाप्त हो गयी। १९६६ में, जम्मू में उनका निधन हो गया।

2

ज़िन्दा कौल : विशिष्ट कश्मीरी कवि

कश्मीरी भाषा के कवि के रूप में ही ज़िन्दा कौल की प्रतिभा का सबसे अच्छा मूल्यांकन किया जा सकता है। इस संत कवि की कश्मीरी कविताएँ बहुत ज्यादा नहीं हैं। लगभग पचास कविताएँ ही ऐसी हैं। इन कविताओं के विवेचनात्मक अध्ययन से पता चलता है कि इनकी मौलिकता और गहराई ने ही ज़िन्दा कौल को अपने समकालीनों में विशिष्ट बनाया।

प्रारंभ में ज़िन्दा कौल उर्दू, फ़ारसी और हिन्दी भाषा में भी लिखते थे लेकिन इनमें से किसी भी भाषा में वे अपने का सहजता से व्यक्त नहीं कर पाये। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि मरीचिका की तरह ऊपर दिखनेवाले नश्वर चोले को भेदकर अंतःस्थल में निवास करनेवाले प्राण तत्त्व तक जाएँ। ऐसा केवल अपनी मातृभाषा— कश्मीरी में ही संभव हो सकता था। यह भी सत्य है कि कश्मीरी के कुछ अन्य प्रसिद्ध कवियों ने उर्दू में लिखना शुरू किया लेकिन बाद में वे कश्मीरी में ही लौट आये। इस सन्दर्भ में प्रसिद्ध जनकवि ग़ुलाम-अहमद महजुर (सन् १८८५–१९५२) को लिया जा सकता है। वे वर्षों भारत में रहे, उर्दू में लिखते रहे लेकिन अंततः मौलाना शिबली के सुझाव पर कश्मीरी में ही लिखने लगे।

इसी प्रकार के एक दूसरे कवि पंडित दीनानाथ कौल 'नादिम' भी हैं, जिन्होंने अपनी कविता की शुरूआत उर्दू से की लेकिन बाद में वे अपनी मातृ-भाषा की आँचल में ही आ गये।

हालाँकि इसमें कुछ देर हो गयी थी, लेकिन ज़िन्दा कौल जीवन के उत्तरार्द्ध में कश्मीरी कवियों की अग्रणी पंक्ति में आ गये थे। लल्लेश्वरी से लेकर अपने समय तक के कश्मीरी काव्य का उन्होंने गवेषणात्मक दृष्टि से अध्ययन किया। धार्मिक कविताओं ने उन्हें सबसे ज्यादा प्रभावित किया। उस समय उन्हें कश्मीरी भाषा में कविता रचने का बहुत कम अभ्यास था। उन्होंने एक बार मृदु मुस्कान के साथ बताया था— 'जब मैं कश्मीरी कवियों का अध्ययन कर रहा था, मैंने

---

१. अपनी गंभीर कविताओं के लिए कवि द्वारा प्रयुक्त एक विनम्र उक्ति।.

कभी नहीं सोचा था कि मैं अपने को किसी प्रकार के 'लोलो' के योग्य परिवर्तित कर पाऊँगा।"

कश्मीरी कवियों में से परमानन्द (नन्दराम) उनके बहुत प्रिय कवि थे। उनकी शब्द योजना इतनी सरल और छन्द इतने प्रसिद्ध थे कि आम जनता उसे बहुत पसन्द करती थी। ज़िन्दा कौल के शब्दों में—परमानन्द की कविताएँ वास्तव में ऐसे धार्मिक गीत थे, जो कश्मीरी लोगों के मानस और परिवेश के बहुत निकट थे। ज़िन्दा कौल जहाँ भी जाते उन्हें परमानन्द के गीत सुनने को मिलते थे। ये गीत जैसे वहाँ के लोगों की नियमित दिनचर्या में शामिल हो गये थे।

भक्त कवि परमानन्द को ज़िन्दा कौल ने पूरी तरह समझा। उनकी भाषा में एक ऐसी नाटकीयता थी, जो पाठकों के मन में आनन्द का अनुभव पैदा कर देती थी।

कश्मीर की एकान्त घाटी में ज़िन्दा कौल ने इस महान कवि के साथ कुछ दिन बिताये। ज़िन्दा कौल ने उनकी कई कविताओं का अंग्रेज़ी में अनुवाद भी किया। उनके जीवन काल काय ही समय था, जब उनके अन्दर धीरे-धीरे एकांत भाव ने प्रवेश किया और उन्हें अकेला रहना अधिक भाने लगा। ज़िन्दगी के शोर शराबे से दूर उनका मन ईश्वर के महान प्रेम की अनुभूति करने लगा। इस प्रकार की भक्ति और अध्ययन का परिणाम यह हुआ कि ज़िन्दा कौल कश्मीरी में कविताएँ लिखने को 'आविष्ट' हो गये।

स्पष्टता और विश्वास उनकी कविताओं के मुख्य गुण हैं। उनकी शैली सरल और विचारपूर्ण है। उनकी उपमाएँ बड़ी उपयुक्त और समझने में आसान हैं। पाठक कविताओं की गहराई तक जा सकता है। शब्दों के अर्थ पर्त-दर-पर्त खोल सकता है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि शैली की दृष्टि से एक परिपक्व मस्तिष्क ईश्वरीय प्रेरणा के रूप में कितनी बारीक़ी से अपनी बात, मोतियों जैसे शब्दों में एक प्रवाह के साथ कहता चला जाता है। कवि ने प्रेम की उस मदिरा को समझा जाता था जो 'लल्ला वाक्यानि' में से निःसृत हुआ था। वास्तव में, यह एक संत कवि और एकता के पैग़म्बर की दैवी पुकार थी।

कश्मीरी चिन्तन में लल्लेश्वरी ने योग के द्वारा महत्त्वपूर्ण योगदान किया था। साथ ही, उन्होंने अपनी समस्त सत्ता को ईश्वरीय 'कृपा की एक बूँद' में विसर्जित कर दिया था। उन्होंने अपने सारे अस्तित्व को उस आत्मा के रूप में निरूपित कर दिया था, जो अपने को मानवाकार में विकसित कर सकती है या कृष्ण पक्ष के चाँद की तरह क्षीण हो सकती है।

परमानन्द की रचनाओं के अध्ययन से ज़िन्दा कौल बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने उन्नीसवीं शताब्दी के इस महान भक्त कवि की कविताओं का अंग्रेज़ी में अनुवाद किया।

'राधा स्वयंवर,' 'सुदामा चरित,' और 'शिव लगन' परमानन्द के तीन ऐसे बड़े काव्य-नाटक हैं, जो अपनी लाभात्मक शब्दावली के कारण संगीतात्मक और मिथकों के कारण बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। ये कविताएँ अपने कथ्य के कारण प्रभावित करती हैं। इनमें अनेक घरेलू और शांत कृषि जीवन में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों का अत्यन्त सार्थक रूप में, प्रतीकों के माध्यम से प्रयोग किया गया है। लगता है कवि इन साधनों के प्रयोग से पूर्णतया परिचित है और इनके बीच रहकर उसने इन्हें गहराई से आत्मसात किया है। एक परिपक्व व पूर्ण काव्य रचना के ये उदाहरण हैं। इन प्रतीकों के माध्यम से परमानन्द ने जिस प्रेम और भक्ति का संदेश दिया, उन्हें ज़िन्दा कौल ने बड़े विश्वास के साथ सरल अंग्रेज़ी में प्रस्तुत किया।

ज़िन्दा कौल की प्रारम्भिक कश्मीरी कविताएँ अपने कथ्य और विचारों में परिपक्व हैं। इन्हें देखकर ऐसा नहीं लगता कि यह किसी नौसिखुए का पद्याभ्यास है। परिपक्वता के दर्शन हमें शुरू से ही होने लगते हैं तथा विचारों की गहराई निरंतर बढ़ती जाती है जो अंततः 'ईश्वर प्रेम' की ओर उन्मुख होती दीख पड़ती है।

बीसवीं शताब्दी में पं० ज़िन्दा कौल एक सच्चे, प्रमुख और प्रौढ़ कश्मीर कवि के रूप में माने जाने लगे। उन्हें एक सच्चे आध्यात्मिक कवि के रूप में विशेष प्रसिद्धि मिली। उनकी कविता में आद्यन्त सन्त परम्परा का विकास मिलता है, जो पाठकों को कुरुचिपूर्ण तथा फूहड़ रुचि से दूर करने में सहायक होता है तथा उन्हें वास्तविक ज्ञान की तरफ बढ़ने में मदद करता है। इस प्रकार कश्मीरी कविता में धार्मिक परम्परा को विकसित करने वाले कवियों में ज़िन्दा कौल का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

इसी सन्दर्भ में 'लीला गानों' के प्रणेता के रूप में प्रसिद्ध कृष्ण राज़दान (मृत्यु १९२५), समदमीर (मृत्यु १९५९) और वर्तमान कवि अहद ज़रगार के नाम लिये जा सकते हैं। मूल रूप में ये कवि रहस्यवादी परम्परा से सम्बद्ध रहे लेकिन इन्होंने अपनी भावनाओं और विचारों को इस प्रकार गीतात्मक शैली और निर्लिप्तता के साथ प्रस्तुत किया कि सारी कश्मीर घाटी में इसकी धूम मच गयी। इन कवियों ने यह दिखाया कि किस प्रकार स्वार्थी प्रवृत्तियाँ भी उस परम ब्रह्म के प्रेम में अंततः विलीन और उदात्त हो जाती हैं।

शिक्षण में ही अपना अमूल्य जीवन लगा देने के कारण 'मास्टर जी' के रूप में प्रसिद्ध पं. ज़िन्दा कौल (१८८४–१९६६) तब व्यापक रूप से जाने गये जब उनके भक्तिपूर्ण गीत नर-नारियों द्वारा गाये जाने लगे।

कश्मीर के स्थानीय वाद्य-यन्त्रों में अब तक पहले से एक परिवर्तन भी आ गया था। अब तुम्बकन, मिट्टी के घड़े, धातुओं के घड़े, पीतल की कटोरियाँ

साज, सन्तूर आदि जैसे देशी वाद्य-यन्त्रों का प्रयोग होने लगा था। धार्मिक प्रार्थनाओं में हारमोनियम का प्रयोग भी शुरू हो गया था। ऐसे कला प्रेमी, जो पंजाब और उत्तर प्रदेश से घूम कर आये थे, वे "रास लीला" और "रास-मण्डल" जैसे संगीतमय कलात्मक अभिव्यक्तियों को अपने साथ यहाँ ले आये थे। कृष्ण के अनुयायीगण इन लीलाओं का आयोजन किया करते थे। ऐसे आम आयोजनों में नृत्य, नाट्य और गान का अद्भुत समावेश होता था।

कश्मीर के ऐसे गायक जो भजन और 'लल्ला वाक्यानि' को संगीत के साथ गाते थे, उन्हें हारमोनियम ने बहुत आकर्षित किया। एक सरल वाद्ययन्त्र होने के कारण हारमोनियम ऐसे गायकों के लिए एक वरदान साबित हुआ।

कश्मीर के ग्रामीण क्षेत्रों में दूसरे कश्मीरी गान समूहगान के रूप में गाये जाते थे। इसके लिए गाँव के स्थानीय जन-कवियों को बहुत आदर प्राप्त था। इन कवियों को 'गुनमत' कहा जाता का, जो चारण के रूप में ख्यात थे। इन समूह गानों में देशी वाद्य-यंत्र—इकतारा जैसा 'चोंचा'—(सितार का प्रारम्भिक रूप) का प्रयोग किया जाता था। इन कश्मीरी गीतों को व्यापक जनता मुग्ध होकर सुनती थी। साथ ही समूह गान की ही एक शैली "रोव" को भी बहुत पसन्द किया जाता था। इसमें महिलाओं की क़तारें एक दूसरे की बाँह में बाहें फँसा कर और कमर में हाथ डालकर दो पंक्तियों में आमने-सामने खड़ी होती थीं। पहली क़तार एक तरफ़ से गाने की एक पंक्ति कही जाती थी और दूसरी क़तार गाने की दूसरी पूरक पंक्ति गाती थी और संगीत ही इसका आधार होता था। इस प्रकार समूहगान का यह कार्यक्रम अत्यन्त आकर्षक होता था।

ऐसे कार्यक्रमों में प्राय: उन गीतों के रचयिता भी अपना वाद्ययन्त्र लेकर उपस्थित होते थे और गाने के साथ विभोर होकर अपना बाजा भी बजाते थे। ऐसे क्षण में वे दुनिया का दु:ख दर्द भूलकर परमानन्द की अवस्था में चले जाते थे। समाज के तमाम जागरिक बंधनों से वे मुक्त हो जाते थे। ऐसे ही मौलिक भक्त गायकों में कवि परमानन्द (नन्दराम, १७९१–१८८५) का नाम भी लिया जा सकता है। यहाँ इसका भी उल्लेख किया जा सकता हैं कि बहुधा कविगण अपने गीतों के लिए संगीत नहीं दे पाते थे। अत: जिस किसी ने भी—स्त्री हो या पुरुष—उनके गीतों के लिए संगीत तैयार किया हो, वे उसे सुन-कर अत्यन्त प्रसन्न होते थे। कश्मीर में इस प्रकार के समूहगान (स्त्री या पुरुष स्वर में) प्रस्तुत करने की परम्परा आज भी वर्तमान है।

परमानन्द की मृत्यु सन् १८८५ में ही हो गयी थी लेकिन उनकी परम्परा को जीवित रखने के लिए ही जैसे ज़िन्दा कौल पैदा हो चुके थे।

ज़िन्दा कौल की सभी कविताएँ छोटी हैं, जिन्हें हम लम्बी कविताओं के रूप जानते हैं, वैसी कविताएँ ज़िन्दा कौल ने नहीं लिखीं। उनकी छोटी कविताएँ वे

गीत या स्तोत्र हैं—जो दिव्य प्रेम तथा ईश्वर की प्रशंसा में लिखी गई। उन्हें 'लोल दयास प्रार्थना' (प्रेम-प्रार्थना) के नाम से जाना जाता है। इनमें न तो किसी प्रकार के गुणगान हैं न ही कोई आत्मकातरता है। इन गीतों की भाषा ईश्वर प्रेम के आवेग से पूरित हुई हैं। प्रभु की उपासना से जो अपूर्व आनन्द प्राप्त होता है, ये गीत भावात्मक रूप से इसी तथ्य को उजागर करते हैं।

इन गीतों में कोई कथावस्तु नहीं है। लेकिन ये जाग्रत मानस के विशिष्ट अनुभव हैं, जो ईश्वर के प्रति अनुराग जगाने में सहायक होते हैं। इन गीतों का उद्देश्य है जीवन-जगत् के प्रति पैदा हुए भ्रम को समाप्त करना तथा अपने ग़लत कार्यों के लिए वास्तव में पश्चात्ताप करना। नीचे जो पंक्तियाँ उद्धृत की गयी हैं, उनसे कवि मानस और कवि हृदय की स्थितियाँ और प्रार्थना के अनुरूप वास्तविक भाव स्पष्ट होते हैं—

"ओ महान प्रेम !
मैं तुम्हारे अतिरिक्त किसी ईश्वर को नहीं जानता,
अपनी शक्ति से मुझे उद्बुद्ध करो
और मेरे अंतर में निवास करो।
तुमसे कोई भी दूरी
मुझे वेदना के अथाह सागर में ले जाता है
क्योंकि हमारा आदर्श, हमारा आराध्य
बहुत दूर है
मैं क्लात हो चुका हूँ—
पहाड़ियों और घाटियों में तुम्हें
खोजते-खोजते...........
अब आओ और मेरे हृदय में निवास करो।"

ज़िन्दा कौल के काव्य में विभिन्न स्थलों पर महाभारत और रामायण के प्रसंग आये हैं। बहुधा असहायता का बोध भी उत्पन्न हुआ है। धार्मिक कर्म कांडों में कौल की कोई रुचि नहीं थी। वे मानते थे कि ये कर्मकांड मानव मन में भ्रम पैदा करते हैं और चीज़ों की वास्तविकता समझने में बाधा डालते हैं। उनके अनुसार, जो लोग धार्मिक कर्मकांड में विश्वास करते हैं, उनके सोचने-विचारने की प्रक्रिया में जंग लग जाता है। इस प्रकार के कर्मकांड आनन्द के वास्तवित स्रोत को धूमिल करते हैं।

ज़िन्दा कौल के अनुसार पंडितों और धार्मिक कर्मकांडों ने जीवन में प्रेम के विशाल और उन्मुक्त प्रवाह को संकुचित कर दिया है, जिसके फलस्वरूप संकीर्ण विचारों ने चारों ओर तमाम गंदगियाँ जमा कर दी हैं—

'पान करने दो मुझे,

स्वच्छ, शांत और निर्मल जल
मूल उद्गम स्थल का
न कि पंडितों और पुस्तकों
द्वारा बँधे बँधाये
गंदे संकीर्ण झरनों का।'

जिन्दा कौल की कविताओं में वेदांत और कश्मीरी शैव-दोनों ही दर्शनों का प्रभाव मौजूद है। ऐसा इसलिए हुआ है जिससे कि सम्राट रूपी आत्मा के अनुरंजनार्थ भावों का प्रस्तुतिकरण हो। काल और पदार्थ के साथ सोल्लास नृत्य करने के लिए शुद्ध चेतना (कृपया इस शब्द के प्रयोग की अनुमति दें) अंतरिक्ष में उतरती है। स्वर्गिक कौशल दिखाने के लिए क्या यह एक दिव्य नाटक है, जो माया के विरुद्ध एक प्रतिपक्षी की भूमिका अदा करता है? चेतना और पदार्थ, जीवन और मृत्यु, प्रकाश और अंधकार के बीच यह अन्तर्लीला चलती रहती है।

"योर आमुत गिण्डनार" (ईश्वर लीला रंजन हेतु मात्र स्वयं को रूपायित करता है) जिन्दा कौल की एक नाटकीय और विलक्षण कविता है। इस कविता में जहाँ जवाहर नेहरू का प्रसंग आता है, वहाँ 'जवाहिर' शब्द का इस्तेमाल कवि ने श्लेष में किया है। उन्हें एक ऐसे हीरे के रूप में प्रतीकित किया गया है, जो अपनी इच्छा के कारण ही जेल जाना स्वीकार करता है। यह जेल शरीर है और हीरा आत्मा!

प्रस्तुत लेखक को याद है कि अभिनव गुप्त के काव्य संकलन 'संग्रहेन तोत्र' की एक कविता की व्याख्या करते हुए स्व० पं. जिन्दा कौल ने जवाहरलाल को विंस्टन चर्चिल जैसा तेज बताया था। चर्चिल ने कहा था कि नेहरू ने घृणा और डर पर विजय पा ली थी।

जवाहरलाल नेहरू की मृत्यु के बाद जिन्दा कौल ने उन पर जो कविता लिखी थी वह कुछ इस प्रकार थी—

'अपने देश की खातिर
वे अंतरिक्ष से भी परे गये
उन्होंने स्वयं क़ैद स्वीकार किया
ओ मेरे 'जवाहर' अनमोल रत्न!
ग़लत चीज़ों के विरुद्ध
तुम हमेशा सक्रिय रहे कभी शिथिल नहीं हुए
अपने विविध कार्यों द्वारा
हमेशा भय पर विजय पायी
हमेशा चन्दन और चमेली की तरह

सुगन्ध फैलाते रहे
अपने विरोधी के रूप में भी देखने पर
वे हमेशा
चेतना और यथार्थ
प्रकाश और अन्धकार
जीवन और मृत्यु
एक से लगेंगे
बुद्ध, शंकराचार्य, रवीन्द्रनाथ
ने जैसे फिर मनोरंजार्थ
जीवन धारण किया हो।

जिन्दा कौल के सबसे अच्छे प्रार्थना गीतों में है—'वह (ईश्वर, आराध्य) आज आएगा।'' इसमें भक्ति-भाव की असीम गहराई है। शब्द रचना इतनी सरल और प्रवाहपूर्ण कि कोई एक साँस में ही इसे पढ़ जाए। विशेषता यह है कि इस गीत में कोई टेक नहीं हैं फिर भी एक संगीतमयता और ऐसी लय है कि पहली पंक्ति से यह हमारे हृदय में उतरने लगता है। शुरू की दो पंक्तियाँ देखें,

''गुरु के आगमन की आहट सुनता हूँ आज।
फूलों से भर दूँगा मैं उनका पथ।''

गीत में जो भाव-विह्वलता है, उसे सहज ही पकड़ पाना संभव नहीं है इस गीत में तेरह पद हैं मानो वे हीरकमाल के हीरे हों। इनमें भाव-प्रवणता तथा आत्मिक अनुभव का ऐसा संयोजन है, जो भावातिरेक पैदा करता है और आनन्द विभोर होकर इसका सच्चा पाठक इसे गाने-गुनगुनाने लगता है। चाहें तो इन पंक्तियों को टेक के रूप में भी रखा जा सकता है लेकिन इन्हें दुहराए बिना भी हर पद की कल्पनाशीलता और गहराई खुलती चलती है। शब्दों का चयन और संगीतमयता इसे एक आध्यात्मिक ऊँचाई तक ले जाती हैं।

जिन्दा कौल को अपनी ऐसी रचनाओं को एकांत में बैठकर एकाग्र होकर सुनना बहुत भाता था। उस समय उनकी विचित्र अवस्था हो जाती थी—आँखों में उद्गार भरे आँसू और होठों पर मन्द-मधुर मुस्कान! शाम के वक्त रोज ही उनके कमरे में इस गीत का टेप धीमे-धीमे बजता और वे आसन की मुद्रा में बैठे इसे सुनते रहते, इसका रसपान करते रहते। इस मुद्रा में उनकी आँखें बन्द होतीं, कोमल हाथ घुटनों पर पड़े होते और वे बुद्ध की-सी तन्द्रा में चले जाते—अक्सर योगियों का भ्रम हो आता उन्हें देखकर। इस तरह उनका वह कमरा (जम्मू में उनका आवास) एक ऐतिहासिक महत्त्व की वस्तु हो गया।

बातों-बातों में मैंने एक बार जिन्दा कौल से मैक्सिम गोर्की का जिक्र किया था। कहा था कि किस प्रकार वह (गोर्की) निरीश्वरवादी रूसी लेखक एक

दूसरे अत्यंत महत्त्वपूर्ण लेखक लियो तोल्सतॉय से भेंट करने गया था। लियो तब सामने फैले विराट समुद्र को अपलक निहार रहे थे—खोए हुए, डूबे हुए। गोर्की ने उनकी तन्द्रा नहीं तोड़ी, घंटों तन्द्रा टूटने का इन्तजार करते रहे। जब तोल्सतॉय की तन्द्रा टूटी, दोनों जब साथ-साथ घर लौटने लगे तो तोल्सतॉय ने गोर्की से कहा—

"गोर्की क्या तुम कभी ईश्वर में
विश्वास नहीं कर सकते।"

गोर्की ने कहा—'नहीं।'

दूसरे ही क्षण काउण्ट ने फिर गोर्की से पूछा—

"जब समुद्र किनारे शांत
बैठा मैं निहार रहा था
तुमने मुझे टोका क्यों नहीं?"

गोर्की ने उत्तर दिया,

"मैं तुम्हें निहार रहा था काउण्ट!
तुम एक देवता की तरह दीख रहे थे।"

शायद काउण्ट की ही तरह तन्द्रालस जिन्दा कौल ने यह प्रसग सुनते ही आँखें खोल दीं फिर कहा—"गौतम बुद्ध ने अपने शिष्य आनन्द से कहा था—"मैं ईश्वर नहीं हूं, देखो दूसरों की तरह मुझे भी दु:ख व्यापता है।"

वास्तव में अपनी कल्पना शक्ति और अनुभवों के द्वारा जिन्दा कौल ने कश्मीरी काव्य-परम्परा को समृद्ध किया। उन्होंने अपने विचारों को सरल शब्दों में व्यक्त किया। उन समकालीनों ने उन्हें बहुत प्रभावित नहीं किया। उनका विचार क्षेत्र अंतरमुखी था और वह "अनन्त की खोज" में लीन था।

एक सांसारिक प्रेमी की तरह जिन्दा कौल ने ईश्वर को कभी नहीं चाहा इसीलिए उनकी कविताओं में मजनूं और फरहाद के दर्शन नहीं होते। कवि 'अनन्त को महसूस करना चाहता है और इसके लिए प्रतीकों का सहारा लेता है। प्रतीकों के माध्यम से ही वह उस विराट शक्ति को प्रस्तुत करना चाहता है जो उसका आराध्य है और इसके लिए प्रतीक योजना तैयार करने में कवि को बहुत परिश्रम नहीं करना पड़ता। प्रतीकात्मक शैली में अपने आराध्य को अपनी कविताओं में उतारने की कला कवि के पास है। कवि का सोचना है कि हमारे जैसे लोगों के लिए तो ईश्वर हर जगह मौजूद होता है; जरूरत है उसे एक बार मन से पुकारने की (लेकिन क्या हमने अपने को इस लायक़ बना लिया है कि हमारी पुकार पर जब वह आए तो हम उसका स्वागत कर सकें?) अपनी विचार-प्रधान कविता 'अप्रस्तुत' में कवि ने इन्हीं परिस्थितियों को स्पष्ट किया है—

"लज्जित और अपवित्र
मैं उसके स्वागत का साहस नहीं बटोर पाता
हालाँकि मेरा हृदय
उसे पूरे सम्मान के साथ बिठाने को खुला है।
हे मेरे आराध्य !
तुम्हारा अनुग्रह तो हमेशा प्रस्तुत है
मैं ही अभी उस योग्य नहीं
बार-बार भूल जाता हूँ
मैं तुम्हें
तुम नहीं भूलते मुझे
एक पल भी !
फूल, चिड़िया और मधुमक्खियों
तथा झील, झरने और बादलों
से तुम्हारा संदेश हमेशा मिलता रहता है।"

जीवन की गुत्थी को जिन्दा कौल मनुष्य और ईश्वर के बीच एक सूत्र मानते हैं। इसीलिए उनकी कविताओं में नश्वर और अनश्वर (जीव-ब्रह्म) को समझने के लिए एक वार्तालाप सा-चलता रहता है। इस वार्तालाप को कवि सरलतम शब्दों में व्यक्त करता है। कवि को विश्वास है कि ईश्वर मनुष्य को आदेश-निर्देश देता रहता है—

"मुझे पाने की अदम्य लालसा के साथ
संसार में तुम रहो
तुम्हारे मन में फूल खिलेंगे
तुम इन्हें अपने आस पास के
मनुजों में बाँट दो
अपने को, मेरे ऊपर छोड़ दो निश्चित !"

कश्मीरी कव्य-परम्परा के अनुसार कवि का 'प्रेमी' कोई महिला न होकर पुरुष ही होता है। वह 'प्रेमी'—अनन्त प्रेमी ईश्वर ही है और कोई नहीं लेकिन उसका वर्णन प्रकृति के विभिन्न उपादानों द्वारा करने की परम्परा है, जैसे—सुन्दर फुलवारी, कोई हरी-भरी पहाड़ी या सुन्दर दृश्य। लेकिन जिन्दा कौल के साथ यह बात नहीं है। उनका परिदृश्य एक सादा-सा घर है, जहाँ पदार्थ वस्तुगत सौन्दर्य असार हो जाते हैं।

जिन्दा कौल वस्तुतः सत्य के अन्वेषी रहे हैं शायद इसीलिए अपने आस-पास की दुनिया में उनकी बहुत रुचि नहीं होती। उनके लिए तो आँखें मूँद कर पड़ा रहना और 'अनन्त' के ध्यान में लीन हो जाना ही सबसे बड़ी चीज़

है। इसीलिए बाहरी दुनिया से प्रायः उनका कोई सम्बन्ध नहीं रह गया था तथा समाज-व्यवस्था दुरुस्त करने में उनकी कोई रुचि नहीं थी। यह एक अधोगति जैसी स्थिति है और अभी इसे ठीक करना भी संभव नहीं दीखता। आज तो सबसे ज़्यादा जरूरी है हृदय-परिवर्तन होना। ऐसा परिवर्तन उस अदृश्य शक्ति की अनुकंपा से ही हो सकता है। कवि इस अदृश्य शक्ति की प्रार्थना इस प्रकार करता है—

"किसी दार्शनिक के पारस (पत्थर) द्वारा
सब कुछ को सोने में बदल जाने दो
अपने आराध्य के चिंतन में मग्न
निरीह प्राणी पीड़ा झेलने को ही बाध्य है।
किसी का अलंकार हुए बिना
कुछ भी ठीक नहीं हो सकता।"

इस कविता में जिन्दा कौल एक नया अर्थ पैदा करते हैं—कविता आध्यात्मिक जरूरतों की एक प्रश्नावली बन जाती है।

कश्मीरी कविता के विकास क्रम में यह वह समय था जब आंतरिक ऊहा पोह की स्थिति से कविता बाहर निकल रही थी ताकि आज की दुनिया की नब्ज़ पर भी हाथ रखा जा सके और नयी दुनिया की चुनौतियों को सामने लाया जा सके।

ज़िन्दा कौल की कविताओं में इन नई सवेदनाओं व चुनौतियों के भी दर्शन होते हैं। उनकी कविता के भाव को धार्मिक तो कहा जा सकता है लेकिन रूढ़िवादी अर्थ में वह धार्मिक नहीं है। इनकी कविताओं में गहरी दार्शनिकता का पुट है।

जिन्दा की कविताओं में वह स्थिति प्रायः नहीं आ पाई है जब प्रेमी (जीव) को आत्मसमर्पण कर देना पड़ता हो। आराध्य (ईश्वर) का सामना भी मान-सम्मान के साथ ही होना चाहिए। यह स्थिति कवि के एक विशिष्ट दर्शन की तरफ़ संकेत है।

कवि एक ऐसे आध्यात्मिक ज्ञान का आकांक्षी है जिसके आधार पर वह अच्छे और बुरे की पहचान कर सके। सुन्दर वस्तुओं की क्षण भंगुरता कवि को परेशान करती है। चाहे मधुर शीतल बयार हो या फूल या मनुष्य की खुशी, कवि उन्हें शंकालु होकर देखता है—ये सभी चीजें क्षणभंगुर हैं। चीजों की यह स्थिति कवि को एक प्रकार से आन्दोलित कर देती है।

कश्मीर घाटी में मौसम परिवर्तन के समय जैसे एक स्वर्गिक आनन्द और उल्लास छा जाता है। चारों तरफ़ नये और ताज़े फूल खिल आते हैं, वृक्ष फूलों से लदे होते हैं। इस अद्भुत सौन्दर्य-दृश्य से ज़िन्दा कौल का कवि-मन आन्दोलित

हो जाता है, उद्गार और पुलक से भर जाता है। प्रकृति के इस अगाध सौन्दर्य को कवि ने अपनी कई छोटी कविताओं में व्यक्ति किया है। इस सन्दर्भ में 'हिमपात' और 'वसन्त' कवि की दो ऐसी विशिष्ट कविताएँ हैं, जिनका उल्लेख आवश्यक है। इन कवियों में भी कवि ने प्रतीकों का सहारा लिया है।

घाटी में हिमपात के वक्त चारों तरफ़ जो सफ़ेदी छायी रहती है, लगता है वह ईश्वर की असीम अनुकंपा की चादर है और उसके नीचे सारी भद्दी और कुरूप चीज़ें ढँक गई हैं। हिमपात के कारण ऊँची-नीची जगहों पर जिस प्रकार सफ़ेदी का यह चँदोवा फैलता है, घाटी एक सफ़ेद वस्त्र में लिपटी दीखती है जिसका कोई अंश ऊँचा है, कोई नीचा। समानता का यानी ईश्वरीय प्रेम की बराबरी का एक ऐसा नैसर्गिक अनुभव होता है, जिसमें कहीं दुराव नहीं है। जन्म-मृत्यु, परिचित-अपरिचित, बाहर-भीतर हर जगह नैसर्गिकता का चँदोवा एक समान फैला होता है। इस पूरे दृश्य की विराटिता को 'हिमपात' जैसी कविता में कवि ने पकड़ने की कोशिश की है।

'वसन्त' शीर्षक कविता में भी व्यापकता का ऐसा ही अनुभव होता है। पूरी घाटी में वसंत का असीम सौन्दर्य फैला हुआ है। वह उस अदृश्य और महान नियंता के उल्लास का प्रतीक है। कवि सबसे इस उल्लास व आनन्द को महसूस करने की अपील करता है, आह्वान करता है कि आओ, देखो उस नियंता का सौन्दर्य! झिसा की झाड़ियों, झरनों और उसके आस-पास, हरी-हरी दूबों के मखमली बिस्तर वसंत की मादक हवाएँ, कलरव करते पंछी, खिलती हुई कलियों, तथा प्रस्फुटित पुष्पों आदि विभिन्न प्राकृतिक उपादानों में उस विराट रचयिता का जो अगाध सुन्दर रूप फैला है, उसे देखो और उस आनन्द को महसूस करो, देखो, किस प्रकार नीलम जैसे स्वच्छ नीले चँदोवे (आकाश) के नीचे इन उपादानों के बीच उस महान रचयिता की पूरी रचना एक संगीतमयता के साथ रची बसी है —

"अगर तुम प्रकृति के साथ
एकाकार हो जाओ
तो इससे बढ़कर
स्वर्ग और है कहाँ ?
इसके उजाड़ और बीहड़
हो जाने में भी आकर्षण है—
स्वतंत्र और उन्मुक्त विकास के लिए
जुही के खिलने तक
धीरज रखो—
आराध्य बिन बुलाये तुम तक चला आएगा।"

संगीतमयता के साथ ही कवि अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए विस्तृत प्राकृतिक वर्णन का भी सहारा लेता है। उसकी कविता का यह एक प्रमुख पक्ष है लेकिन सबसे बड़ा पक्ष है, आंतरिक एकाग्रता और निर्लिप्तता। मनुष्य जीवन के तमाम सम्बन्ध और आकांक्षाएँ यहाँ आकर असार सिद्ध हो जाती हैं। एकाग्रता, निर्लिप्तता, भावनाओं का आवेग और अपने आराध्य के प्रति परम निष्ठा आदि को व्यक्त करने के लिए कवि अत्यंत सटीक उपमाओं और रूपकों का सहारा लेता है। उपमाओं और रूपकों के कारण भावनाओं को बोधगम्य बनाने में उसे आसानी होती है। यही कारण है कि प्रकृति का विराट रूप कवि को अत्यंत प्रभावित करता है और कई बार उत्तेजित भी।

प्रकृति के प्रति ज़िन्दा कौल के असीम आकर्षण का एक कारण यह भी है कि ग्रामीण वातावरण से उनका लगाव रहा है ग्रामीण वातावरण की एक गहरी छाप उनके मानस में बनी हुई थी। मानव जाति ग्रामीण वातावरण में पैदा होती है, बढ़ती है, लेकिन वहाँ उसके संस्कार निर्मित होते हैं यह तो एक बात है लेकिन ग्रामीण व प्राकृतिक वस्तुएँ वस्तुतः एक आध्यात्मिक अर्थ रखती हैं। प्रकृति की इस आध्यात्मिकता के कारण ही ज़िन्दा कौल की कविताओं में प्रकृति की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है। पहाड़ियाँ, वृक्ष, फूल, झरने आदि जैसे कवि के लिए एक आध्यात्मिक या पारलौकिक संदेश लेकर उपस्थित होते हैं। १९१५ में जब महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर कश्मीर पधारे तो ज़िन्दा कौल ने उन्हें ध्यान में रख कर लिखा था—

'नीचे की अँधेरी घाटियों में
क़तार के क़तार खड़े देवदार!
जैसे एक स्वप्न में
नियंता प्रकृति अपनी आत्मोद्गार व्यक्त कर रही हो
क्योंकि वह बात सपाटबयानी में नहीं कही जा सकती।'

शहरी जीवन की कुरूपता और हृदयहीनता से कवि बहुत ऊब चुका है— डकैती, लूट-मार आदि के द्वारा अमीरों द्वारा ग़रीबों के उत्पीड़न की घटनाएँ कवि को असहज करती हैं। इस माहौल से छुटकारा पाने का एक ही रास्ता दीखता है शहरों से भागकर गाँव चले जाना और गाँव से फिर कभी वापस न लौटना।

शहरों में उत्पीड़न और हृदयहीनता निरंतर बढ़ती जा रही है। उत्पीड़न का ऐसा खेल खेलनेवाले फूले हुए निर्दयी मकड़े की तरह हैं, जो अपने जाल में ग़रीब लोगों को फँसाकर उसे चूस लेते हैं। ऐसे अमीरों और हृदयहीनों द्वारा ग़रीबों को कुचले जाने की घटनाओं ने कवि को अत्यंत दुखी कर दिया

है। कवि के पास एक सुखी और आदर्श समाज की परिकल्पना थी, चाहे वह काल्पनिक ही क्यों न हो अभी—

'डकैती और लूट जहाँ न हो,
ग़रीब कुचले न जाएँ
किसी अभागे की तरह असहाय न हों वे !
जहाँ जानवरों को भी सुरक्षा मिल सके
और अमीरों का भोज हो 'रक्तहीन'!
अन्न, फल और दूध हो जहाँ प्रचुर मात्रा में
जहाँ आदमी पढ़ते, खेलते और गाते हों !
जहाँ बच्चे विलाप न करते हों,
जहाँ बहुओं से बेटियों जैसा व्यवहार हो
उन बेटियों जैसा, जिन्हें पुत्रों की तरह रखा जाता हो !
कोई भी पददलित व विकलांग न हो
लोग संतुष्ट हो, शांत हों,
वे ईश्वर को हृदय से याद करें !
शांति और प्रेम के नगर में ही
कोई आध्यात्मिक ऊँचाई प्राप्त कर सकता है।"

कुछ काव्य-मर्मज्ञों के अनुसार शैली और शिल्प के लिए उनकी कविता 'असहायावस्था' (हेल्पलेसनेस) सबसे उत्कृष्ट निदर्शन है। एक तरफ़ अगर उनके मधुर व संगीतमय गीत वेदनामय स्थितियों तथा भावनाओं को प्रस्तुत करते हैं तो इस प्रकार की कविताएँ विचारों की गहराई तक जाती हैं। इन कविताओं में जिन्दा कौल उस सत्य को उद्घाटित करने की कोशिश करते हैं, जिसके लिए वे उस अदृश्य आराध्य से आत्मालाप की स्थिति तक जाते हैं। अपने प्रश्नों के उत्तर के लिए कौल किस प्रकार छटपटाते रहते हैं और कहाँ-कहाँ भटकते हैं, इसका आभास ऐसी कविता में होता है लेकिन क्या ऐसे प्रश्नों का उत्तर पा जाना इतना सरल है ?

अपनी कविताओं में जिन्दा कौल ने सौन्दर्य और प्रेम को एक नया अर्थ दिया है। सौन्दर्य और प्रेम के पुराने व प्रचिलित अर्थ व स्वरूप से अलग हट-कर वे उसे नया संदर्भ देते हैं। आराध्य की साधना में लगे रह कर ही वे ऐसा अर्थ प्राप्त कर सके हैं। इसीलिए अपनी इस तरह की कविताओं द्वारा वे कश्मीरी काव्य-साहित्य को एक नए मोड़ पर ले आते हैं और कश्मीरी काव्य-साहित्य में एक महत्त्वपूर्ण योगदान करते हैं।

परमात्मा से विछोह की पीड़ा, अस्पष्ट दृष्टि, दिग्भ्रम, अनिर्णय, रुग्ण मानसिकता, निरीह स्थिति, ओढ़ी हुई बीमारियों, अनन्त आकांक्षाएँ आदि के

लिए संत-कवियों की मानसिक अवस्थाओं का वर्णन ज़िन्दा कौल ने अपनी इस कविता में किया है। वे कवियों की मानसिक दशा को पूरी तरह खोल कर हमारे सामने रखना चाहते हैं जो इस कविता की एक विशिष्टता है।

ज़िन्दा कौल ने गीत और कविताएँ तो लिखीं ही उन्होंने ग़ज़लें भी लिखीं। कश्मीरी काव्य-साहित्य में इन ग़ज़लों का विशेष महत्त्व है। इनसे अद्‌भुत अर्थ खुलते हैं। विचारों व शब्द योजना की दृष्टि से ये ग़ज़लें कश्मीरी-काव्य की कई महत्वपूर्ण कविताओं से आगे निकल जाती हैं। इन ग़ज़लों में कल्पना की ऐसी सार्थक उड़ान है, जो हृदय की गहराइयों से निकलकर लोकोत्तर ऊँचाइयों तक जाती है। कल्पना की ऐसी सार्थक उड़ान आम तौर पर कश्मीरी कवियों में दिखायी नहीं देती। इसकी कल्पनिकता में विस्तार है।

कुछ आलोचकों ने ज़िन्दा कौल के काव्य के बारे में आये विचारों को परम्परागत और रूढ़िवादी कहा है लेकिन महजुर ने 'मास्टर जी' के कवि रूप को इस प्रकार व्यक्त किया है—

"मेरे गीतों को ऊँचा उठने दो
और आकाश के रंग लेने दो
अवसाद को और गहराने दो
ज़िन्दा कौल तुम अमर रहो।"

ज़िन्दा कौल की कविताओं को उसकी कल्पना की गहराई में जाकर समझने में इस प्रकार के वक्तव्य सहायक होते हैं। साथ ही, इस प्रकार के संत कवियों की कविताओं को समझने के लिए एक वातावरण तैयार करते है।

जिस प्रकार के विचार और भाव उपनिषदों में आये हैं कवि प्रायः उन्हीं शाश्वत भावों व विचारों को अपनी कविता में समेटने की कोशिश करता है। उपनिषदों में सत्य को प्राप्त करनेवाला अपने आराध्य से ज्ञान और विवेक की माँग करता है उसी प्रकार ज़िन्दा कौल भी अपनी कविताओं में उस अतीन्द्रिय ज्ञान की माँग करते हैं।

अपनी कविताओं में गहरे निराशावादी भावों को व्यक्त करते हुए ज़िन्दा कौल ने अपने आराध्य और नियंता के प्रति एक उलाहना भी व्यक्त की है। इस उलाहने को चाहें तो शिकायत भी कह सकते हैं, कश्मीरी कविता को एक नया अर्थ दिया है। लेकिन खूबी यह है कि कविताएँ इस प्रकार की शब्द रचना से मंडित है कि अनीश्वरवादी दृष्टिकोण सामने नहीं आते, कविता के नए अर्थ सामने आते हैं।

महत्त्वपूर्ण यह है कि ज़िन्दा कौल ने अपनी भावनाओं की निःस्वार्थता की रक्षा बड़ी विनम्रता से की है। अपनी मर्यादा की क़ीमत पर उन्होंने धन, वैभव और पक्षपात जैसे प्रवृत्तियों तक से समझौता नहीं किया। एक ही इशारे पर

सहायता के लिए बिछ जानेवाले समर्थ लोगों व अधिकारियों तथा सत्ता की प्रभावशाली हस्तियों से उन्होंने कभी कुछ नहीं कहा। ज़िन्दा कौल के अनुसार—

"मेरे मित्र ऐसे भी हैं
जिन्हें ईश्वर ने सब कुछ दिया है
दूसरों को दान करने के लिए !
ऐसे रहनुमाओं ने बड़ी आत्मीयता से
बहुत कुछ अर्पित करना चाहा
लेकिन मेरे 'कवि' ने उसे स्वीकार नहीं किया !
मैं चाहता हूँ वह अपूर्व संगीत
जो मेरी कला, धर्म और दुनिया है !
ऐसा ही हृदय विश्व को बाँधता है
आर्ष जनों की तरह !
मेरा हृदय तो एक ऐसा रत्न है,
जो ईश्वर प्रेम से दीप्त है !"

अपने विचारों और भावनाओं को अत्यंत सटीक ढंग से व्यक्त करने के लिए ज़िन्दा कौल ने अपनी कविताओं में संस्कृत और फ़ारसी शब्दों का प्रयोग किया है । इन शब्दों का प्रयोग करते समय उन्होंने शब्दों का माधुर्य और लक्षणार्थ बचाये रखा है । कहीं-कहीं इन शब्दों का नया अर्थबोध भी उभरकर सामने आया है ।

ज़िन्दा कौल ने चतुष्पदियाँ भी लिखी हैं, जो विचारों को तीव्र करनेवाली और शिक्षाप्रद हैं। लेकिन यह शिक्षा आध्यात्मिक है । इसीलिए इन चतुष्पदियों का कथ्य आत्मा द्वारा 'सत्यम्' 'शिवम्'' सुन्दरम्' को प्राप्त करने का प्रयास है। इसके लिए धर्म ही वास्तव में सहायक हो सकता है लेकिन रास्ता बहुत लम्बा है। इस रास्ते को पार करने के लिए जन्म और मृत्यु के चक्रों को पार करते हुए आगे बढ़ना है, गन्तव्य की ओर ! इस लम्बे रास्ते को छोटा करने का उपाय है—अपने अहंकार को नष्ट करना ! साथ ही, व्यक्तिवाद और अहम् की भावना समाप्त करना भी उतना ही आवश्यक है ।

इस सन्दर्भ में कवि की सबसे सुन्दर चतुष्पदी शायद वह है, जिसमें वह अपने को एक 'रक्ताभ पुष्प सौन्दर्य' पर केन्द्रित करते हुए देखता है कि उसका हृदय जैसे अग्नि से प्रज्ज्वलित हो रहा है—

"मैंने उस 'रक्ताभ' सौन्दर्य का ध्यान किया
और सारे अन्धेरे जंगल उद्भासित हो गए
पलक झपकते ही कुछ ऐसा हुआ कि
इस आग ने मेरे पापों को जला डाला ।

हृदय में जो आग लगी
उससे सारा कुछ तप गया
और एक चीत्कार निकली
आग ! आग !!..................''

इस प्रकार जन्म से लेकर ज़िन्दा कौल की मृत्यु (१६६६) तक एक विहंगम दृष्टि डाली जा सकती है। साथ ही, उनकी कश्मीरी कविताओं के साथ उनके कवि-रूप को भी समझा जा सकता है।

इस प्रकार की एक संक्षिप्त काव्य-रूपरेखा के साथ ही जरूरी यह भी है कि ज़िन्दा कौल की प्रमुख काव्य प्रवृत्तियों और परम्पराओं को भी संक्षेप में देख लिया जाए। वे जिस काव्य-परम्परा का प्रतिनिधित्व करते थे, उसे रेखांकित करना भी समीचीन होगा।

कवि ने अपनी कविताओं में उस संत-परम्परा का निर्वाह किया है, जो कश्मीर भूमि को सींचती रही। कश्मीर एक ऐसा स्थान रहा, जहाँ विविध संस्कृतियों का एक संयोजन-सा दिखाई देता है। वैदिक हिन्दूवाद ने यहाँ चिंतन का एक बौद्धिक आधार तैयार किया। यह चिंतन शांति व प्रगतिशीलता का चिंतन था। आगे चल कर गौतम बुद्ध के उपदेश भी इसमें सम्मिलित हो गए। जबकि बाद में बौद्ध धर्म एक रूढ़िवादी सिद्धान्त में परिणत हो गया। वह करुणा पर आधृत (लॉ आफ कम्पैसन) तथा इसे ही अंतिम मुक्ति (निर्वाण) माननेवाला सिद्धान्त हो गया।

कश्मीर के शांत और सुखद वातावरण में धीरे-धीरे शैव दर्शन का विकास हुआ। अभिनवगुप्त, उत्पल और सोमानन्द जैसे प्रकाण्ड विद्वानों ने शैव दर्शन के चिंतन को आगे बढ़ाया। इन विद्वानों ने 'आत्म दर्शन' का सिद्धान्त प्रतिपादित किया।

अभिनवगुप्त के 'संग्राही स्तोत्र' जो आध्यात्मिक गीतों का संकलन है, वस्तुतः इस दार्शनिक सिद्धान्त के सार-संक्षेप प्रस्तुत करता है। ये गीत वास्तव में कश्मीर के रहस्यवादी दर्शन के प्राण हैं। इन गीतों में मानव-आनन्द के संदर्भ में आत्मा को उस अनंत आराध्य से एकाकार किया गया है, जिसकी तलाश में जीवात्मा भटकती रहती है।

समय बीतने के साथ ही साथ कश्मीर की शांत घाटी में नये-नये दर्शन का प्रवेश होता गया। वहाँ के एकांत वातावरण के कारण दार्शनिक स्वाभाविक रूप से वहाँ खिंचे चले आये और उन्होंने नये दर्शन प्रतिपादित किये।

बौद्ध दर्शन जब सांप्रदायिकता और रूढ़िवादिता के घेरे में बंद होकर रह गया और 'हीनयान' का पतन शुरू हो गया तो इसी वातावरण में उसे नयी दिशा भी मिली। बौद्ध धर्म में यहाँ तक आते-आते इतना ही नहीं हुआ था कि

भिक्षुकों के लिए बनायी गयी कठोर नियमावली ने इस दर्शन को जड़-सा बना दिया था, बल्कि समय परिवर्तन के साथ उसमें परिवर्तन या लचीलेपन की दशा भी अवरुद्ध हो गयी थी। इस स्थिति को एक प्रकार से काफ़ी विलम्ब के बाद 'महायान' सम्प्रदाय के दार्शनिकों ने तोड़ा। नागार्जुन, अश्वघोष तथा कई अन्य दार्शनिकों ने इस दिशा में सक्रिय पहल ली। ये दार्शनिक विज्ञानी भी थे। अश्वघोष को सापेक्षता का सिद्धान्त प्रतिपादित करने का पहला श्रेय भी दिया जाता है।

बौद्ध दर्शन को इन नये दार्शनिकों ने जो नयी धारा दी, उसके कारण यह दर्शन हिन्दू दर्शन से प्रभावित हुआ और इसमें अवतारवाद जैसी धारणा का प्रवेश भी किन्हीं अर्थों में हो गया। बुद्ध को एक अवतार का स्वरूप प्रदान कर मन्दिरों में उनकी पूजा तक शुरू हो गयी। हिन्दू दर्शन में देवकुल की परम्परा के अनुरूप बौद्ध दर्शन में भी अवतार की परिकल्पना सुदृढ़ हो गयी।

कश्मीरी भाषा के मूल के बारे में विभिन्न भाषा शास्त्रियों के मतों व सिद्धान्तों की गहराई से छानबीन किये बिना ही यह सत्य सामने आ गया कि चौदहवीं शताब्दी के मध्य में "वाख" (संस्कृत के वाक्य) नाम का एक छन्द प्रचलित हो गया था। इस छन्द में काव्य-रचनाएँ शुरू हो गयी थीं। चार पंक्तियों की यह चतुष्पदी जनता के बीच लोकप्रिय हो गयी थी। यहाँ इस बात विवेचना का अवसर नहीं है कि किस प्रकार योगेश्वरी लल्ला ने इस शब्द को, इस छन्द को विधिवत एक काव्य-छन्द का रूप दिया। 'वाख' को वास्तव में उन्होंने एक काव्य-छन्द की गरिमा प्रदान की।

कश्मीर जैसी अकेली और हिमालय की इस सुनसान घाटी में इतिहास की एक विकास-रेखा दिखायी देती है। यहाँ के इतिहास में तेजी से परिवर्तन हुए। ख़ास तौर से भाषा के मामले में अरबी और फ़ारसी का प्रभाव तेज़ी से बढ़ा। ईस्वी सन् १३७२ में फ़ारसी के रहस्यवादी कवि शाह हमदान अपने सात सौ सईद शिष्यों के साथ यहाँ आये। इनमें सईद अली हमदानी बड़े विद्वान थे। वे लेखक और कवि भी थे। उन्होंने धर्म, नीति-शास्त्र, रहस्यवाद, राजनीति और आकृति-विज्ञान को लेकर अरबी और फ़ारसी में रचनाएँ कीं।

लल्लेश्वरी के समय में ही इस्लाम धर्म ने कश्मीर में प्रवेश किया। यह वह काल था, जब यहाँ का सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन और वातावरण एक संकट की स्थिति में था।

इसी समय के आसपास योगेश्वरी लल्ला शैव-दर्शन की एक व्याख्या के साथ आये। उन्होंने शैव-दर्शन की जो व्याख्या प्रस्तुत की, उसके कारण उन्हें अब तक याद किया जाता है। उन्होंने कश्मीरी भाषा को भी आम बोलचाल की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया। इस मामले में उनका योगदान अपूर्व है।

इस क्षेत्र में प्राकृत और अपभ्रंश का मूल रूप क्या था, यह कहना अब मुश्किल है। लेकिन यही वह काल था जब मूर्तिभंजक 'सिकन्दर' यहाँ आये और अपने साथ इस्लाम धर्म ले आये। उनके आने के बाद यहाँ के लोगों का इस्लाम धर्म में धर्मान्तरण व्यापक रूप से हुआ। बड़ी संख्या में लोगों ने इस्लाम धर्म स्वीकार किया और फ़ारसी जबान तेज़ी से प्रमुखता पाने लगी। फ़ारसी का विकास इतनी तेज़ी से हुआ कि यहाँ की मातृभाषा ही एक प्रकार से लुप्त होने लगी। फ़ारसी शब्दों की व्यापकता और लोकप्रियता ने यहाँ की मातृभाषा को प्रभावित नहीं किया बल्कि कहना चाहिए कि यहाँ की मातृभाषा भी उसमें पूरी तरह घुल मिल गयी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि राजनीति और सांस्कृतिक दृष्टि से कश्मीर पर कई प्रकार के आक्रमण हुए। इस तूफ़ानी आक्रमण के प्रभाव से किस प्रकार कश्मीर बच सका इस पर जब हम सोचते हैं तो कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य हमारे सामने आते हैं :—

१. संस्कृति की तरह ही फ़ारसी भाषा का भी श्रेष्ठ और समृद्ध दार्शनिक आधार था।

२. कश्मीरी भाषा में आधार के रूप में संस्कृत के वे शब्द विद्यमान थे, जिनमें ज्यादा और मूलभूत परिवर्तन संभव नहीं था।

३. ईश्वर और आत्मा को समझने में जिस दार्शनिक आधार की जरूरत होती है, वे कश्मीरी और संस्कृत में लगभग समान थे। धर्म को लेकर दोनों का स्वरूप रहस्यवादी ही था। विचारों का वहाँ कोई टकराव नहीं था।

४. कश्मीर के नैसर्गिक दृश्यों के प्रति एक कोमल दृष्टिकोण तथा उसके प्राकृतिक-संगीत में एक प्रकार का आरोह-अवरोह।

जिन्दा कौल के अनुसार, मानव मन अपने अन्वेषण के लिए स्वयं आधार खोजता है तथा उसमें स्वाभाविक तौर पर एक आध्यात्मिक लालसा होती है। ईश्वर की सुधि और सुरभि पाते ही वह उसकी खोज में निकल पड़ता है हालाँकि ईश्वर तो पूरे ब्रह्माण्ड में व्याप्त होता है। या यों कहें कि ईश्वर अपने को पूरे ब्रह्माण्ड में अभिव्यक्त करता है। किसी-न किसी रूप में वह एक कली में भी प्रस्फुटित होता है।

आत्मा और ईश्वर का रिश्ता पतंग और दीपक का होता है। अपने सहज बोध, ईश्वरासक्ति या प्राकृतिक उद्वेलन के कारण पतंगा दीपक के पास जाता है। हम इस क्रिया या आसक्ति का परिणाम तो जानते हैं लेकिन ईश्वरासक्ति तर्कातीत है।

कश्मीर पर चाहे जिस का भी प्रभाव रहा हो यहाँ के आध्यात्मिक इतिहास में महात्मा काश्यप का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने 'सर्वोच्च सत्य' के

शान्तिपूर्ण आराधना पर जोर दिया था और प्राचीन काल से ही यहाँ इस धारणा का अत्यन्त प्रमुखता से पालन होता आया है। ऋषि लौगक्ष के समय जबकि यहाँ कर्मकाण्ड का औपचारिक श्रीगणेश हुआ उससे पहले कठोर विधि विधान के साथ वैदिक नियमों का अनुपालन होता। तब शारदा लिपि प्रचिलित थी। भूर्ज की छाल पर पाण्डुलिपियाँ तैयार की जाती थीं। इसका ऐतिहासिक महत्त्व और ऐतिहासिक स्रोतों के रूप में इसके प्रमाण 'नीलमत पुराण' में मिलते हैं।

वैदिक काल के उत्तरार्द्ध में कश्मीर में जो गतिविधियाँ चलती रहीं, उनसे सिद्ध होता है कि वहाँ दार्शनिक ज्ञान, गहन चिन्तन और साधना का एक वातावरण था। चिन्तन का उद्देश्य वास्तव में दार्शनिक ज्ञान प्राप्त करना ही था।

'तशगर-ए-शरीफ़' के दिव्य व्यक्तित्व वाले शेख नूरूद्दीन वली वास्तव में कश्मीर के संरक्षक संत थे। वे योगेश्वरी लल्ला के समकालीन थे और उनका व्यक्तित्व श्रेष्ठ विचारों से परिपूर्ण था। कश्मीर के जन-जीवन में एक सहज-सामान्य स्थिति लाने तथा उसे बनाये रखने में उन्होंने अपूर्व योगदान किया। स्थितियाँ कुछ इस प्रकार हो गयीं कि कश्मीर के मुसलमान सन्तों ने अपने को 'ऋषि' कहलाने में गर्व का अनुभव किया।

लोगों ने भी एक तरफ़ तो अभूतपूर्व सहनशीलता दिखायी और दूसरी तरफ अन्य धर्मों के प्रति आदर का भाव भी व्यक्त किया। इसीलिए जिस प्रकार योगेश्वरी लल्ला के 'वाक्य' जन-सामान्य के बीच लोकप्रिय थे उसी प्रकार मुसलमान सन्त नूरूद्दीन (नन्द ऋषि) की उक्तियाँ भी घर-घर में प्रचलित हुईं। इन उक्तियों ने लोगों को प्रभावित भी किया।

फ़ारसी भाषा और साहित्य ने कश्मीर के बुद्धि जीवियों को आकर्षित किया। फ़ारसी की शैली, रूप, मुहावरे और विचारों ने इस सुरम्य घाटी के बुद्धिजीवियों को अपनी ओर खींचा। खासकर विचारों को व्यक्त करने के तरीक़े ने सबसे ज्यादा आकर्षित किया।

शाहमीरी वंश के सुल्तान शिहाबुद्दीन (सन् १३५४–१३७३) जो कश्मीर के आरंभिक मुस्लिम शासकों में थे, ने कश्मीर घाटी में अरबी और फ़ारसी के अध्ययन के एक उच्च अध्ययन केन्द्र की स्थापना की।

१५८६ ई० तक अर्थात् कश्मीर में चकों के शासन काल आरंभ होने तक फ़ारसी वहाँ की राजभाषा बन चुकी थी। साथ ही, यहाँ के लोगों ने इस भाषा को समृद्ध करना भी शुरू कर दिया था। उधर सुलतान जैनुल आबदीन (१४२०–१४७०) ने बग़दाद के मुल्ला हाफ़िज़, बुखारा के मुल्ला पाशा, क़ाज़ी जमालुद्दीन, रशीदी और मुल्ला अहमद कश्मीरी आदि प्रमुख विद्वानों और कवियों को संस्कृत वाङ्मय से परिचित होने को प्रेरित भी किया। जिन हिन्दू

विद्वानों के नाम उल्लेखनीय हैं उनमें योध भट्ट, जोना राजा, श्रीवर, तिलक-आचार्य (बौद्ध), शिव भट्ट, कपूर भट्ट आदि थे। इन्हें सुलतान का संरक्षण भी प्राप्त था। उनकी लचीली नीति के कारण यहाँ एक अभूत पूर्व सहज वातावरण तैयार हुआ। इस नीति के कारण सुलतान को काफ़ी प्रसिद्धि भी मिली। सुलतान ने जाति, वर्ग और धर्म से अलग रहने की नीति अपनायी। इसके कारण स्वाभाविक रूप से फ़ारसी के शब्दों का प्रचलन व प्रयोग भी बढ़ने लगा। फलस्वरूप भाषा समृद्ध भी हुई।

दो भाषाओं और संस्कृतियों के अन्तर्सम्बन्धों के कारण रहस्यवाद का प्रादुर्भाव अवश्यंभावी हो गया। रहस्यवाद के प्रादुर्भाव के लिए यहाँ का शान्त वतावरण भी बहुत अनुकूल सिद्ध हुआ। अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता और समान नीतिविषयक नियमों ने भी इसके लिए एक सकारात्मक भूमिका निभायी। धार्मिक मतभेदों से यहाँ के लोगों का मन और मस्तिष्क ऊपर उठ गया। इस प्रकार प्रबुद्ध लोगों ने कविताओं में रहस्यवादी परम्परा के दर्शन किये। और उनके स्वभाव में एक प्रकार से रहस्यवाद ने प्रवेश किया। उनके चरित्र का एक गुण हो गया रहस्यवाद ! सभी क्षेत्र में इसीलिए सह-अस्तित्व की भावना का विकास हुआ।

कश्मीर में फ़ारसी भाषा के सबसे प्रमुख विद्वान के रूप में यहाँ मुल्ला मोहम्मद ताहिर ग़नी का नामोल्लेख किया जा सकता है। उनकी फ़ारसी कवि-ताओं का यहाँ की काव्य-परम्परा में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनमें कल्पना की उड़ान देखते ही बनती है।

कश्मीर के इस सांस्कृतिक इतिहास ने फ़ारस के राजकवि साइब को कश्मीर आने तथा मुल्ला मोहम्मद ताहिर ग़नी कश्मीरी से मिलने और बात-चीत करने को प्रेरित किया। इस प्रकार कश्मीर के इतिहास तथा प्राकृतिक वातावरण ने लोगों को क़रीब आने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। प्रचंड शीत के कारण भी लोगों का एक-दूसरे के निकट आना सम्भव हो सका। काव्य परम्पराएँ अपना प्रतीक स्वयं निर्मित करती हैं। यहाँ के काव्य में भी लोल (प्रेम) तत्त्व की प्रधानता है। जिन्दा कौल के अनुसार—

"तुम चाहे जिसे भी प्यार करते हो—
वस्तुतः ईश्वर को ही प्यार करते हो,
यही मेरा विश्वास है,
मेरा दर्शन !"

उनकी कविताएँ चाहे जिस रूप में भी लिखी गयी हों, उनके पूरे काव्य में लोल (प्रेम) की अनन्त धारा बहती दिखायी देती है। इसे पहले भी स्पष्ट किया जा चुका है कि जिन्दा कौल की कविताओं में ब्रह्म का अनुभव करने के लिए

प्रेम को ही एक मात्र साधन माना गया है ।

लेकिन उन्नीसवीं शताब्दी में यह परम्परा धूमिल होती दिखायी देती है । इस काल को सांस्कृतिक पुनर्जागरण के रूप में देखा गया । इस समय भावनाओं और आकांक्षाओं की एक नयी लहर पैदा हुई, जिसने कविता को एक नयी दिशा दी । इस समय जो नया काव्य-रूप सामने आया उसे मसनवी कहा गया । ज़िन्दा कौल की रुचि इस नये काव्य-रूप की तरफ़ विकसित नहीं हुई । स्वच्छन्दता वाद का यह रूप उन्हें पसन्द नहीं आया क्योंकि यह रूप फ़ारसी के मसनवी छन्द की देखादेखी कश्मीरी में आया था । इस छन्द में जो कुछ लिखा जाता आम तौर पर वह फ़ारसी मनसवियों का अनुवाद या अनुसरण ही होता ।

कश्मीर वस्तुतः देश के अन्य हिस्सों से अलग-थलग नहीं था । अन्य स्थानों की भाषाओं के अध्ययन से कविता में एक नया आयाम पैदा हुआ । नये काव्य-रूपों, छन्दों तथा प्रभावों ने कविता का एक नया परिदृश्य पैदा किया । कविता में प्रेम, शौर्य और युद्ध का प्रवेश हुआ और वह वर्णनात्मक प्रधान हो गयी । जिस प्रकार एक समपार्श्व काँच (ग्लास प्रिज़्म) में कई प्रकाश की किरणें मिली-जुली रहती हैं, उसी प्रकार लौकिक और आध्यात्मिक प्रेम एक-दूसरे में प्रतिबिम्बित हो सकते हैं । लौकिक प्रेम के द्वारा आध्यात्मिक प्रेम तक पहुँचा जा सकता है—ईश्वर का प्रकाश और पवित्र किरणें मनुष्य की प्रकृति द्वारा ही प्रतिबिम्बित होती हैं ।)

धीरे-धीरे स्थिति यह पैदा हुई कि कश्मीरी भाषा पर फ़ारसी का प्रभुत्व बढ़ता गया और कश्मीरी भाषा की मौलिकता नष्ट होने लगी लेकिन परम्परा बिल्कुल मरी नहीं । परमानन्द (नन्दराम, १७९१–१८८५) के लीलागान धीरे-धीरे ग्रामीण क्षेत्रों में प्रचिलित हो चुके थे । उनकी कविताएँ न केवल वहाँ की परम्परा के अनुरूप थीं बल्कि वह अद्‌भुत प्रतीकात्मकता से भरी हुई भी थीं ।

परमानन्द के बाद कश्मीरी भाषा में ज़िन्दा कौल ने इस काव्य-परम्परा को जीवित रखा । वे विचारों की साधना से कभी अलग नहीं हुए । हर दिन वे इस साधना में और गहरे उतरते चले गये । अपनी ग़ज़लों में ज़िन्दा कौल ने परमानन्द की काव्य-परम्परा को जीवित रखा । इन ग़ज़लों की विषय वस्तु इतनी सरल, लोकप्रिय और आकर्षक है कि इसे समझने में कोई मुश्किल नहीं होती । ये सहज और संगीतमय हैं इसलिए इन्हें सुनकर आनन्द की अनुभूति होती है । इन ग़ज़लों का महत्त्व वस्तुतः इस बात में है कि इसकी गहराई में जाने पर इसके नये अर्थ खुलते जाते हैं । इनमें विचारों का ऐसा प्रभाव है कि कवि जिस बात को कहना चाहता है उसे समझने में बड़ी आसानी होती है । वे अस्वाभाविक और कृत्रिम नहीं दीखतीं ।

नन्दराम की मृत्यु १८८५ में हुई और इसके ठीक एक वर्ष पूर्व १८८४ में जिन्दा कौल का जन्म हो गया था। जैसे जिन्दा कौल ने कश्मीरी काव्य-परम्परा को जीवित रखने के लिए ही जन्म लिया हो। ज़िन्दा के काव्य में ऐसे प्रकाश का दर्शन होता है, जो 'अनन्त' की खोज का प्रयास करता है। कवि की यह खोज कभी समाप्त नहीं होती। कवि का यह काव्य-प्रकाश वस्तुतः अँधेरे में चमकते सितारे-सा दीखता है। सांसारिक अँधेरे में भटकते लोगों को उनकी रचना क्षितिज से छनकर आती हल्की उजास की तरह प्रतीत होती है। ज़िन्दा का काव्य वस्तुतः आम लोगों के आस-पास घिरी अज्ञान की बदली में भोर का तारा (शुक्र तारा) जैसा ज्ञान प्रकाश देता है।

आधुनिक काल के सबसे प्रसिद्ध कश्मीरी कवि महजूर ने एक स्थान पर कहा है कि सोने और पीतल की तरह सच्चे और झूठे कवियों की दो श्रेणियाँ होती हैं।

कश्मीरी कविता में एक लम्बे अंतराल के बाद कवि महजूर की कविता 'गुल-बुलबुल' आई, जो अपने छन्द और अपनी मधुरता के कारण अत्यन्त महत्वपूर्ण कविता मानी जा सकती है। लेकिन इसका वक्तव्य इस कविता की तात्त्विक समृद्धि का प्रमाण नहीं माना जाना चाहिए। महजुर ने इस सन्दर्भ में स्वयं एक स्थान पर कहा है कि अब्दुल अहमद आज़ाद के बाद कश्मीर की क्रांतिकारी कविताएँ "गुल-बुलबुल" से आगे बढ़ती रही हैं। कविता में इस प्रकार की होड़, जो भावों और विचारों को आगे ले जाने की होड़ है वस्तुतः आत्मा की तलाश की होड़ है। इस तरह की कविताएँ अंततः मनुष्य को शांति देती है तथा ईश्वर की दिव्य कृपा प्राप्त करने की तरफ़ ले जाती हैं।

ज़िन्दा कौल की उर्दू और फ़ारसी कविताएँ 'दिवान-ए-साबित' में संकलित हैं। यह एक छोटी-सी काव्य-पुस्तिका है। इसमें उनकी उर्दू की ७२ और फ़ारसी की दस कविताएँ संकलित हैं। पहले एक संत और बाद में एक कवि होने के कारण ज़िन्दा कौल ने जीवन और उसकी पीड़ा तथा ईश्वर के विचारों को व्यक्त करने के लिए कविता को एक माध्यम के तौर पर चुना। उनकी निम्नलिखित कविता, जो प्रार्थना स्वरूप लिखी गयी है, में इस तथ्य को बखूबी देखा जा सकता है—

"जिज्ञासु जनों के लिए तुम ज्ञान हो
रहस्यवादियों के लिए साधना !
तुम्हीं ब्रह्म हो, तुम ही यज्ञ
तुम विश्व के जीवन हो, विश्व के प्रकाश !

—अज्ञानता में खोया हुआ और दिग्भ्रमित कवि की अवस्था एक अनिश्चय में पड़ी है। सांसारिक वैभव से अलग मुक्ति और उपासना के लिए वह निर्लिप्त

मन से प्रार्थना करता है। इसीलिए कविता की शब्द योजना सरल और शुद्ध है। जिन्दा कौल के अनुसार निर्लिप्तता ही एकमात्र ऐसी शक्ति है, जो मनुष्य को उसके अहम् से मुक्ति दिला सकती है।

जिन्दा कौल की कविताओं में वास्तविकता के दर्शन भी होते हैं। 'क्लर्की' शीर्षक उनकी कविता में इस तत्त्व की पराकाष्ठा दिखायी देती है—

"दूध, मक्खन और फल
हमें पसन्द नहीं
कटोरी भर आलू और मटर को ही
भोजन-सा मानकर
हम होते हैं संतुष्ट!"

जिन्दा कौल की उर्दू कविताओं में कश्मीर का जो प्राकृतिक सौन्दर्य वर्णित है, उसमें नैसर्गिक निर्लिप्तता का बोध होता है और सत्य की तलाश झलकती है। 'जोश' मलीहाबादी ने उनकी कविताओं की सरलता और निर्लिप्तता को ही ध्यान में रखकर कहा था कि जिन्दा कौल की भाषा में स्थानीय और क्षेत्रीय संवेदना का रंग बहुत गहरा है इसीलिए उनकी कविताएँ लोगों के बीच मान्य और ग्राह्य हैं।

जिन्दा कौल की हिन्दी कविताएँ 'पत्र पुष्प' नामक पुस्तक में संकलित हैं। इन कविताओं में वस्तुतः कवि के निजी विचार, अनुभव और चिन्तन व्यक्त हुए हैं। कवि ने मानव-आत्मा और उसके स्वामी का अहंकारी 'मैं' को अत्याचारी 'कंस' के रूप में प्रतीकित किया है। उनके अनुसार विश्वास 'राधा' है और प्रेम 'कृष्ण'। कृष्ण की बाँसुरी जीवन धारा को ही बदल देती है। इस बाँसुरी की टेर का मानव मन-मस्तिष्क पर रचनात्मक प्रभाव पड़ता है—प्रेम, देशभक्ति, भाईचारा, कविता, कला तथा जीवन-जगत की समस्त अच्छाइयाँ एक अजूबे की तरह जिन्दगी में आ जाती हैं। ऐसा प्रेम के कारण होता है क्योंकि प्रेम में इतनी शक्ति होती है कि ये तमाम चीज़ें अच्छाइयों में बदल जाती हैं और अन्ततः स्वार्थी व निकृष्ट प्रवृत्तियों का नाश हो जाता है। इस प्रकार सभी दूषित प्रवृत्तियाँ क्रमशः प्रेम में विलीन हो जाती हैं। साहित्य का आनन्द मनुष्य को उल्लास से भर देता है और काम के लिए एक मधुर व सुखद वातावरण पैदा करता है। कवि के इस संग्रह में इस लिए आनन्द के स्रोत—प्रेम—पर ही ज़ोर दिया गया है।

इस पेड़ से उस पेड़, इस डाल से उस डाल पर खुशी से फुदकती और चहचहाती चिड़िया और ज़मीन पर रहनेवाले आदमी में एक रिश्ता होता है। इस रिश्ते को स्पष्ट करती है जिन्दा कौल की एक छोटी सी कविता—"भ्रातृत्व"। कवि कहता है कि प्रेम के इस साम्राज्य में फूल गुनगुनाते हैं

"पिता की प्रशंसा के गीत ! और "माँ" ! वह तो ईश्वर की सृजन-मूलक आकांक्षा है।

इस तरह अंतरिक्ष की पुत्री ध्वनि, जल की पुत्री उर्मियाँ, सूर्य पुत्री किरन, वायु पुत्री विचार, चाँद की बेटी चाँदनी, अग्नि पुत्री ज्योति, जंगल की बेटी संगीत, बादल की बेटी ठंड, फूलों से लदी शाखें और हिरनी की चकित दृष्टि—ये सब बहनें हैं उस कवि की, जिसने "भ्रातृत्व" जैसी कविता लिखी है। ये सब की सब उस परम पिता की प्रार्थना करती हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि ज़िन्दा कौल की हिन्दी कविताएँ कविता से ज़्यादा आध्यात्मिक व धार्मिक गीत हैं।

3

अनुवाद

स्वर्गीय पंडित जिन्दा कौल की कुछ महत्त्वपूर्ण कविताओं को यहाँ अनुवाद के लिए चुना गया है। कवि की लोकप्रिय कविताओं से अलग यहाँ ऐसी कविताओं को लिया गया है, जो विचारों और कल्पना से परिपूर्ण हैं। इनमें से कई ऐसी कविताएँ हैं—जिन्हें गहरे भाव और विचार तथा असहायता के बोध के कारण कवि स्वयं पसन्द करता था।

इन कविताओं (अनुवादों) को सावधानी से पढ़ने की ज़रूरत है। उनकी ग़ज़लें स्वतंत्र और मुक्त हैं तथा चतुष्पदियों के रूप में लिखी गयी हैं। यही कारण है कि उनकी कविताओं में एक सौन्दर्य आ गया है। इनमें उपमाओं का जिस प्रकार प्रयोग है उससे उनकी बिम्ब विधानवाली शैली स्पष्ट होती है। इनकी चतुष्पदियाँ प्रायः एक मनोदशा तथा स्थिति का वर्णन करती हैं। और अवसाद की स्थिति में ले जाती हैं।

अनुवाद में इस बात की पूरी कोशिश की गई है कि प्रवाह और मौलिकता बनी रहे, लेकिन कई जगह कुछ कमियाँ भी रह गई होंगी।

अनन्त के रत्न

प्रेमोन्मद हृदय
लपटों से घिरा
बेचैन भटक रहा है इधर-उधर
आँखें बन्द, ध्यानावस्थित
अपने को किसी प्रेम कुंज में पाता हूँ।

गहरी मीठी नींद में
जैसे चिलचिलाती धूप में
कड़ी मेहनत के बाद
एक छायादार चिनार के नीचे
उस आदमी को देखा,
जो नाम रूप हीन
या फिर कोई धूप तथा तांबई शरीर
सिन्धु नदी के शीतल जल में गोते लगाता।
एक ब्रजबाला
चेतना का उल्लास पाने को
सम्मिलित होती है रासलीला में
महसूस करती है उत्फुल्ल आनन्द
नाच के उस घेरे में !
बाहर असंख्य जंजीरें हैं
बरबाद यौवन और स्वतंत्रता का छलावा
लेकिन बचपन की ताज़गी—
वह एक सम्यक् दृष्टि थी—
जिसने हृदय से हृदय को जोड़ दिया—
और प्रेमलिप्त पलकें बंद किए
(मैं) ईश्वर के बारे में सोचता रहा

गड़रिये की गुहार

मेरा प्यार कहाँ गया ?
मैं इस घने जंगल में अकेला हूँ
रात बादलों से भरी और अँधेरी है—
मेरे हर क़दम लड़खड़ाते हैं,
लो ! मैं वंशी की ध्वनि सुन रहा हूँ
हे मेघ गर्जन !
ठहरो, कुछ देर ठहरो

कि मैं अपने प्रेमी के
पदचिह्न देख सकूँ
वह पापियों का भी सहायक है
उसका स्वर ही गीता है ।
मैं कोई ध्यान साधना तो जानता नहीं
बस उसकी,—केवल उसी की खोज करता हूँ।
दिन-रात
वह मेरे साथ प्रसन्न खेलता रहा है—
पहले बहुत पहले !
जोकि वह मेरे हृदय के बहुत ही समीप है, बहुत समीप ।
फिर भी तुम नहीं बताओगे
कि वह है किधर ?
कि जैसे तुमने कोई क़सम खा रखी हो
लेकिन इस क़सम को तोड़ो
और इस पाप के भागी बनो ।
राधा का प्यार उसे मुझसे छीन कर ले गया
लेकिन उसे प्रिया के संग लौटना भी तो चाहिए था ।
वह जानता है कि वही जीवन है ।
और उससे बिछोह मेरी मौत !
उससे कहो कि मेरे अंतिम साँसों की यही पुकार थी
कि कहाँ चला गया मेरा कन्हैया
इतना भर तो वह जान ले !

वह आज आएगा

जानता हूँ
मेरे गुरुदेव आज आएँगे
मैं उनके पथ पर फूल बिछा दूँगा ।
दुख और पश्चात्ताप से प्रक्षालित कर मैं अपने चित्त को निर्मल कर लूँगा
उनके लिए एक सम्मानपूर्ण वेदी—

होगी मेरे पूजागृह में !
मेरे शुभ कार्यों के फल से निसृत रस से भरा होगा उनका पात्र
अपने हृदय में सहेज कर
मैं उनके चरण आँसुओं से पखारूँगा
मैं उन्हें अपनी कथा और पीड़ा सुनाऊँगा
और उसे याद दिलाऊँगा कि
किस प्रकार बाँहों में भर कर वे शिशुवत दुलारते थे मुझे।
मेरे उन्मुक्त हृदय में ही दिखेगी उन्हें
मेरा आदर और प्रेम की गहराई
मेरा प्यार स्वच्छ जल के सोते-सा उनके हृदय में फूटेगा
सब कुछ समर्पित कर
मेरा मस्तक उनके चरणों पर होगा
जहाँ मेरा 'नाम' और 'आकार' मिट जाएगा।
कृष्ण पक्ष के चाँद की तरह।
इस तरह मेरा निकृष्ट अहम् डूबेगा
सूर्य की व्यापक सत्ता में।

महजूर के प्रति

धूल की एक ढेर को—
ईश्वर ने फूलों में परिवर्तित कर दिया।
और अपनी असीम अनुकम्पा से
जल की बूँदों को मोतियों में बदल दिया —
जिसके कृपापूर्ण संस्पर्श से मनुष्य
फूल (गुलाब), पक्षियों और पशुओं की यात्रा कर
अपने इस स्वरूप में आया
एक सन्तुलित हृदय और मस्तिष्क के साथ
बुद्धिमान और श्रेष्ठ
क्रमशः ऊँचा उठते जाने की आकांक्षाओं के साथ
वृक्षों पर फैली अमर लता की तरह !

यह मानव-हृदय
उसके प्यार के सागर में एक बुलबुले की तरह है—
भावनाओं और संवेदनाओं की आँधी संजोएँ !
वह, जो धर्म को अपनी इच्छाओं के लिए इस्तेमाल करता है
मस्जिद तैयार करता है
और इसकी दुकान बना लेता है।
अति सूक्ष्म विवेचन की चतुराई से बचते हुए।
उसी की निभती हैं खूब
जो बिना किसी दुःख व चिन्ता के
अपनी जीवन-यात्रा पूरी करता है।
प्रबुद्ध मन विस्मय से भरा होता है
और आँखें अभिव्यक्ति शून्य
लेकिन कश्मीर महजूर पर गर्व करता है।
एक गंभीर-हृदय-कवि
जिसने गीतात्मक पद्य को
मीठी शराब बना दिया
और उनका कविता-संग्रह
एक सुन्दर मदिरालय है
इसीलिए मैंने अपने घर की शराब
बेचनी बन्द कर दी
और पियक्कड़ों ने
मुझे अपनी घटिया दुकान बन्द करने के लिए
धन्यवाद दिया।

घर जाओ

घर जाओ,
अब फूलों में कोई आनन्द शेष नहीं रहा
मेरा हृदय किसी धब्बेदार (वस्तु) को पसन्द नहीं करता
भग्न हृदय

वापस तो हुआ मगर एकाकार नहीं,
करुण संगीत की तरह
प्रेम की वेदना सितारों की ऊँचाई तक गई।
इस रास्ते या उस रास्ते
सबका अन्त आता है एक बार !
बेचैन मानसिक स्थिति
में बने रहने का कोई अर्थ नहीं
कश्मीर के छायादार चिनार,
हरे-भरे मैदान
और झरनों के बावजूद
हृदय में पीड़ा के अंश
वर्तमान रहते हैं।
चित्त था चंचल
और बुद्धि दूषित
ज्ञानदीप
अंधी गुफाओं में—
अपने प्रेमी की गली में
अंधेरी गुफाओं के बीच।
यदि मेरा अस्थि-प्रवाह भी होता तो
कम-से कम उसके साथ होता
जो बेहिचक वहाँ तक जाते हैं।
किसी दिन यह पूरी या टूटी तस्वीर
समाप्त हो जाएगी।
मेरे भाग्य में—
इस वर्ष ग्रहों नक्षत्रों की गति है विचित्र !

यह क्या उचित है ?

मुझे कुछ देने के बजाय
तुमने अपना हाथ खींच लिया

और मेरी हँसी उड़ाई
उफ ! कैसा अपमान !
ओ मेरे प्यार—
क्या यह उचित है !
अनजान राहों पर बढ़ाकर
बीच में ही छोड़ दिया तुमने
भौंचक, किंकर्त्तव्यविमूढ़, खोया हुआ !
क्या यह अच्छा है !
ओ मेरे निर्दय प्रेम
मेरे हृदय पर खिले
आशाओं के पुष्पों को
तुमने खिलने दिया
फिर किसी मनमौजी की तरह उन्हें उखाड़ दिया
क्या यह उचित है,
मेरे प्यार !

आदर्शवाद

ओ मेरी अनन्य प्रिया—
हम प्रेम में हैं परस्पर
मेरी गलतियाँ भुला दो अब
मैं मोती सदृश अपने आँसू उपहार में दूँगा।
मैं तुम्हारी विश्वासी हूँ, दास हूँ,
पीठ पर हल्की थपकी देते ही
मैं तुम्हारे केश सँवारता हूँ।
मैं अपना मदिरालय
तुम्हारी आँखों में पाता हूँ
और शराब के छलकते प्याले छक कर पीता हूँ
बेखुदी का नशा—
जागने से अच्छा है।

किसी को वह सम्राट बनाता है
किसी को कवि, चित्रकार, मूर्तिकार कुछ भी ।
प्रेमी बनते हैं फरहाद या मजनूं—
दीपशिखा की तरफ़ आकर्षित होकर
एक शलभ की तरह
जल मरने के लिए !

उपसंहार

अपने प्रेमी को गुहारना
राहत देता है मुझे
पता नहीं वह सुनता है कि नहीं !
केसरिया धरती के पास
सब्ज़ियों की मेरी दुकान है
इस उम्मीद के साथ कि
कोई खरीदार मेरी सब्ज़ियों को
केसर की सुरभि से भर देगा ।

प्रेम की प्रशंसा में

प्रेम ही आनन्द का स्रोत है, मूल है
इसे जानो
ओ मेरे प्यारे हृदय
प्रेम ही परमात्मा का स्रोत है ।
प्रेमी के लिए उसका कड़वा स्वाद भी
शहद की बूंद-सा मीठा है ।
काल का नुकीला बर्छा भी
स्वागत योग्य है—प्रेम देवता कृष्ण की

सुरीली बाँसुरी की तरह
प्रेम ही परमानन्द का बीज है।
प्रेमी के लिए कठोर शब्द भी
आदर के मधुर शब्द होते हैं
प्रेम के बन्धन वस्तुतः मुक्ति की बाँहें हैं
जो उसे प्रगाढ़ आलिंगन में जकड़ लेती हैं।
प्रेमी के पाँव की धूल
उसकी थकी आँखों के लिए 'सुरमा' है
और उसकी जलती पलकों के लिए चन्दन।
प्रेम ही परमानन्द का कारण है।
मुश्किलों, दिक्कतों में भी प्रेमी
आनन्दित रहता हैं
फाँसी के तख्ते पर भी वह गाता है
मौत के आने पर
वह शान्ति से मुस्कराता है
जैसे आखिरी बसंत में गुलाब।
प्रेम ही परमानन्द का निर्झर है—
मेरे विवेकहीन प्रिय मन
इस रहस्य को जानो।

नाविक, मुझे और मेरे ग्रामवासियों को ले चलो

मैं वहाँ जाना चाहता हूँ
जहाँ सबका ईश्वर में अटूट विश्वास है।
एक ही परमपिता सबका सर्वस्व !
जहाँ प्रेत, परियाँ और दूषित आत्माएँ
मनुष्य के मस्तिष्क पर न छायीं हों
जहाँ प्रेम, सेवा और सद्भाव
जीवन के सुगम और सर्वोच्च नियम हों,
जहाँ सुविस्तृत भूमि हो और सबके रहने के लिए आवास,
जहाँ भोजन, फल और दूध ही दूध हो

जीवन के हर क़दम में सबकी हिस्सेदारी हो,
जहाँ सबके लिए पेट भर भोजन हो
किसी के पास जरूरत से ज्यादा कुछ न हो,
जहाँ कोई लालची न हो,
न ही पड़ोसियों का सामान चुराये कोई
जहाँ न कोई भिखारी हो, न कोई दुश्मन,
जहाँ सबके लिए काम हो
कोई निठल्ला न हो
और काम करनेवालों के लिए
खेलने, पढ़ने, गाने और आनन्द मनाने का वक़्त हो,
जहाँ सभी प्रसन्न हों,
बच्चे रोते न हों,
जहाँ नारियाँ देवी की तरह आदर पाती हों
और पुत्रियाँ पुत्रों की तरह प्यारी हों
जहाँ कोई विधवा न हो,
जहाँ बीमारियाँ, कुरूपताएँ और दुष्टता—
मनुष्य के जीवन-पथ तथा विकास में बाधक न हो,
जहाँ कोई युद्ध के बारे में न जानता हो
और प्रशांत आकाश से
जहरीली गैस और बर्बर मृत्यु की वर्षा न होती हो।
जहाँ साफ़-सुथरे आवास और सुन्दर बाग़ हों
जहाँ कोई भी अभाव और आतंक से प्रताड़ित न हों,
वैसी ही सुन्दर नगरी में
हे मेरे नाविक—
मुझे और मेरे ग्रामवासियों को—
ले चलो।

रोना मना है

उस परम 'मित्र' की खोज के लिए
शांति, अवकाश और उत्साह

कुछ भी नहीं है मेरे पास !
उस 'वास्तविक' जीवन की तलाश में
अपना यह जीवन उत्सर्ग करना नहीं जानता
नहीं जानता अपने दुःख से छुटकारा पाना !
हृदय से परे
मैं केवल विलाप करता हूँ
इस दारुण स्थिति में भी
आँसू बाहर तक नहीं फूटते—

शिक्षक को

अपने इस उद्विग्न मस्तिष्क और जर्जर शरीर से
मैं मुक्ति के लिए संघर्ष कैसे करूँगा ?
अगर पाप की सज़ा पीड़ा भुगतना है
तो मैं उसका (परमात्मा का) जुआ ढोऊँगा।
देखता हूँ निर्दोषों को
पीड़ा और दुःख पाते—
इसलिए मैं केवल अपने तईं न्याय का आकांक्षी नहीं हूँ
न ही उसका कोई अर्थ है
मेरे ईश्वर ! मेरे मालिक !
खुशी कभी कभार ही तो आती है
और एक कौंध की तरह लौट जाती है।
तुम्हारे अनन्त आनन्द-सागर से
क्या हम नश्वरों के लिए नहीं है एक भी बूँद ?
तुम्हारे लिए विश्व टिका है नैतिकता पर
जो परमानन्द की अभिव्यक्ति है
फिर भी दुख और बुराई की दारुण समस्या
आज भी क्यों मुँह को फाड़े खड़ी है ?
तुम्हारी सद्प्रेरणा के मुक़ाबिले, वृथा है
हमारा ज्ञान······हमारी मनीषा।

मेरी दीवाली

धरती और आकाश
दोनों जगह दिवाली।
कल्पना के लोक से उड़ान भरती एक देवी धरा पर उतरेगी।
एक मिठाई वाला अपनी सारी कलाओं का प्रदर्शन करता आ रहा है
एक गायक अपनी सुमधुर संगीत-कला का प्रदर्शन करता आ रहा है।
उसके हृदय में प्रकाश भर गया है।
चतुर्दिक् फैला आलोक उत्तरी ध्रुव की तरफ़ आकर्षित हो गया है।
जैसे वहाँ कोई रहस्यवादी—खड़ा है
और उसकी कल्पना मेघगर्जन में केन्द्रित हो गयी हो
एक पूर्ण व्यक्ति ने
पवित्र वेदी में
अपने समस्त कर्मों को स्वाहा कर दिया हो।
इस प्रकार मेरी हृदय-रूपी कुटिया
धूल-भरी, जीर्ण-शीर्ण हो गयी है।
घाटी के प्रकाश में
यह स्पष्ट है कि
तमिस्रा की देवी माँ काली ही हैं।
कितना विचित्र है कि
अपना सम्पूर्ण प्यार देने पर भी
मेरी नियति भक्तिभाव से परे है,
तुम्हारी अनुकम्पा से विहीन !

महजूर की मजार पर ग्यारह फूल

ताज़े फूल खिल आये हैं
पर हाय ! इनका प्रेमी अब नहीं रहा।

आशा का पुष्पित उपवन
अपनी सुरीली चिड़िया को
खो चुकी है यह फुलवारी !
तुमने अपनी क़लम से काम लिया था
और हारियल के स्वर से भी अच्छी कविताएँ लिखीं
तुम पर न्योछावर है हमारी मातृभाषा—
जिस प्रकार कमल का फूल सूर्य पर न्योछावर है !
मेघ गर्जन के समान तुम्हारे गीतों ने
हमें नींद से जगाया—
नई आशा और जिन्दगी से भर कर
जैसे मृत को जिन्दा किया।
अपनी मातृभूमि के अतिरिक्त
तुम्हें नहीं चाहिए कोई स्वर्ग !
इसीलिए मैं तुम्हारी मज़ार पुष्पों से ढँक देता हूँ
उन फूलों से
जिन्हें मैं तुम्हारे लिए ही ले आया हूँ !
हे मधुर संगीत के गायक
पुष्प प्रेमी महजूर !
तुमने आज, १३७१ हिजरी संवत के दिन
अपने परम मित्र और आराध्य को
फिर से प्राप्त कर लिया !

प्रेम का स्तोत्र

ओ महान प्रेम।
तुम्हारी शक्ति भी ईश्वर के समान अद्भुत है।
तुम्हीं मेरे ईश्वर हो
मेरे हृदय में बसो
ताकि मैं तुम्हारी अर्चना कर सकूँ।
अपनी आँखों के द्वारा
रूप और रंग के सार से,
अपने श्रवण द्वारा

सुर और संगीत की मदिरा से
मैं तुम्हारे प्याले भर दूँगा।
उदात्त कथाओं की तरह
मुझसे एक दूरी बनाये
तुम हँसते हो मुझ पर!
यह दूरी मैं सह नहीं पाता
पृथ्वी की अनन्त गहराइयों में भी
मैं तुम्हें प्यार करता हूँ
मेरी सहायता करो, हे मालिक!
पतंग और दीपक के समान हैं
हम और तुम!
तुम्हारे ऊपर मैं अपना जीवन उत्सर्ग कर दूँगा!
और गौरवपूर्ण अंत हासिल करूँगा!!
तुम्हारे लुभावने चरण कमल
मैं एक भौंरा हूँ
काँटों के बीच छटपटाता हुआ
तुम्हारी ही आशा में टँगा
अपने जीवन को ढो रहा हूँ मैं
खेती करता हूँ जीवन की
आँसू बोता हूँ और मोती काटता हूँ अपनी ही आँखों में
तुम्हारी चन्दनवर्णी देह को पखारने के लिए—
उल्लास के साथ।
संसार के संकीर्ण किनारों के
धर्म का निर्झर बह रहा है
पुजारियों और धर्म ग्रन्थों के रूप में
तमाम गन्दगियाँ समेटता हुआ
मुझे मूल स्रोत से ज्ञान प्राप्त करने में
समर्थ बनाओ!
मेरे वास्तविक स्वरूप
तुम्हीं मेरे अंतर-प्रकाश के स्रोत हो
मुझे एकाकार होने की शक्ति दो
संसार के अन्धकार को दूर करनेवाले
मुझे द्विधा-मुक्त होने में
सक्षम करो।

ग्राओ मेरे निर्देशक

मुझ पर कृपा करो
हे मेरे निर्देशक, पथ प्रदर्शक ग्राग्रो !
इस कठिन ग्रौर ग्रनिश्चित पथ पर
मैं ग्रवसन्न खड़ा हूँ
शरीर रूपी पिंजड़े में क़ैद
मैं ऊपर बहुत ऊपर उड़ने को लालायित हूँ
लेकिन बेकार
क्योंकि पंख नहीं रहे ।
परम सत्य का
पहला ग्रक्षर ही मैं भूल गया
ग्राग्रो मुझे प्रज्ञा प्रदान करो·········ग्राग्रो ।
प्रज्ञा सहायता देती है 'पूर्व' को
ग्रंतिम लक्ष्य तक पहुँचने में
लेकिन 'पश्चिम' ग्रभी भी
वस्तु ग्रौर भौतिक सुखों के गीत गाता है ।
घर में पूजनीय होने के लिए
तुम ही पवित्र ग्रौर सत्य हो
इसके गौरव ग्रौर ग्राभूषण बनो ।
तुम्हारे बारे में सुन-सुन कर
मनुष्य श्रद्धानत हो जाता है
तुम दूर हो ग्रानंद से
ग्रब पास ग्रा जाग्रो ।
शुरू में ही तुमने
मेरी मुक्ति के लिए क़समें खायी थीं
ग्रब उन्हें पूरा करो ग्रौर ग्राग्रो ।
कोई भी सांसारिक वैभव में नहीं चाहता
वे तो मेरी ग्रात्मा पर बोझ की तरह है ।
मैं सब कुछ तुम्हारे ऊपर ही छोड़ता हूँ—
समर्पित हूँ; ग्रब ग्राग्रो !

प्यार का प्रतीक

उसके प्रेम की जयमाला को—
मैंने खो दिया है—
मैं कितना असावधान था,
कैसा कुपात्र !
अंधा व्यक्ति कुछ ढूँढ़ नहीं सकता
बहुमूल्य हीरे भी खो जाते हैं उससे।
पूर्वजन्म में जिन्होंने
ग़रीबों को दान दिया है
वे ही इस जन्म में कुछ पा सकते हैं।
मैं खुद दोषी हूँ (सबको माला दिखा देने के लिए)
इसे मुझे हृदय में सँजोकर रखना चाहिए था—
अपने प्रेम के खज़ाने को दिखाओ मत
वर्ना तुम इसे खो दोगे—
क्या तुमने नहीं देखा है
उन बर्तनों के ढक्कनों को जो खाना पकाने में सहायक होते हैं।
मेरे प्रेम की निशानी खो गयी है
और मैं हतप्रभ हूँ—
एक दुकान से दूसरी दुकान पर भटकता हुआ
न कुछ माँगता हूँ न ख़रीदता
उन्हें मैं अपनी विचारहीनता के बारे में कैसे बताऊँ ?
कैसे खलल डालूँ उनकी रातों में—
क्योंकि उन सबका ध्यान
आनेवाले दिन की ओर लगा है—
विश्वास और आशा के झकोरे खाता।
तुम इसे समझो, जानो कि
'उसका' खज़ाना भरा हुआ है
तुम वहाँ से पा सकते हो प्रेम !
घाटियों और जंगलों में—
बाग़ों, फूलों और सितारों में
उसके प्रेम की असंख्य निशानियाँ

इन चिह्नों में झिलमिला रही हैं !
लेकिन इस प्रकार लड़खड़ाते, डगमगाते
और विवेकशून्यता की स्थिति में
हम उनका सामना कैसे कर सकते हैं ?
भक्ति के लिए झूठी याचना भी
भला किस प्रकार कर सकते हैं हम !
यह जानते हुए भी कि हालत यह है
क्या उसका प्यार हमें अपने से अलग रख सकता है ?
आत्मा और ईश्वर का आध्यात्मिक बन्धन
बच्चों की मित्रता की तरह चंचल नहीं होता ।
पश्चात्ताप करनेवालों और नेक लोगों के प्रति
वह स्नेह दिखाता है—
चतुर लोगों के सामने
वह क्रुद्ध होने का बहाना करता है ।
सुदामा से पूछो—
जिसे उसने प्यार से अपनाया ।
वह सर्वज्ञ भोला भाला ग्वाला—
जो सूरदास की आँखों के कोटर
में बन्द है
चुपचाप उसके भक्ति-गीतों
को सुनते हुए ।

प्रार्थना

—प्रभु ! तुम अंतरिक्ष से भरेपी हो
फिर भी हर क्षण उद्भासित होते हो
तुम ज्ञान-अज्ञान सब में हो विद्यमान
तुम जीवन और आकार सबमें विराजमान ।

—सृष्टि के प्रारभ से भी पहले
तुम्हारा अनन्त अस्तित्व था

तुम्हीं होगे इसके अंत काल में भी !
जो प्रत्यक्ष है वह सब तुम्हारी इच्छा के ही कारण
जो कुछ भी हुआ तिरोहित
वह भी हो गया तुम्हीं में संचित ।

—शारीरिक तंतुओं के गठन
और सूक्ष्म कोशिकाओं के क्रम में
तथा प्राकृतिक नियमों में
तुम्हारी ही प्रज्ञा दीखती है ।
हम उसे चकित होकर देखते हैं
लेकिन कुछ भी समझ नहीं पाते ।

—उसे वहाँ देखो, जहाँ प्रकृति में फैली व्यापक और पुष्पित सृष्टि फैली है
सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर
हर एक पंखुड़ी, हर एक पत्ती में
हे महान चित्रकार !
तुम्हारी तूलिका की अद्भुत छाप दीखती है
तुम्हारी विराट और भव्य कल्पना, अल्पना
देखेगा कोई भी प्रकृति में हर जगह ।

—सूर्य का सौन्दर्य
तो अणुमात्र है
तुम्हारी कृपा का
जिससे पृथ्वी का कण-कण
असंख्य रंग प्राप्त करता है ।
फूलों को सुरभि और मिठास
तथा बुलबुल का मधुर गान
सब तुम्हीं से प्राप्त होता है ।

—तुम्हारी इच्छा ही सृष्टि की उत्पत्ति का नियम है
जिसका अंतिम लक्ष्य है एक संपूर्ण मनुष्य !
प्रकृति की निचली गहराइयों से स्वर्ग की अंतिम ऊँचाई तक जाने के लिए
तुम्हारे ही सहारे का सोपान चाहिए ।

—संसार में फैले सुख दुख
तथा असमानता की व्यापक खाई

वस्तुतः वे प्रना
जिनके द्वारा तुम परीक्षा लेना चाहते हो
हमारे विश्वासों, धैर्य और
अपने दुखी मित्रों के प्रति
हमारी सहानुभूति की।

—तुम क्या हो
इसे ठीक से वर्णित करना
संभव नहीं हुआ वेदों से भी।
वस्तुतः तुम्हारी छवि वर्णित करने का प्रयास करते ही
कारण तक आश्चर्यजनक रूप से विनष्ट हो जाता है।

—हे प्रभु !
प्रत्येक धर्म और आस्था तुम्हारी आराधना करते हैं—
तुम्हें पूजते हैं !
मनुष्य के लिए तुम 'सत्य' हो
योग में समाधि
बुद्ध में निर्वाण-निःस्वार्थ स्व
और वेदों में 'ब्रह्म'
—हे प्रभु !
हमें विवेकपूर्ण रास्ते पर चलने की
इच्छा शक्ति दो
अपने प्यारे भारतवर्ष को
अपना मन्दिर बनाओ
जहाँ हर धर्म और विश्वास के अनुयायी
तुम्हारी उपासना के लिए एकत्रित हैं

—हे प्रभु
हमें अन्धकार से प्रकाश का रास्ता दिखाओ
और भौतिक मृत्यु की तरफ़ बढ़ते हमारे पैरों की
दिशा निर्देश दो
ताकि अंततः हमारा जीवन
तुम्हारी सत्ता में विलीन हो जाये !
अस्तु !

टिप्पणियाँ और सन्दर्भ

कश्मीर के प्रारंभिक कवियों में आस्तिकता की एक परम्परा रही है। वहां के संत कवि कविता को "सत्य की खोज" और उसके लिए विचारों को व्यक्त करने का एक माध्यम मानते रहे हैं। उदाहरण के रूप में हम अभिनवगुप्त तथा उनके अनुयायी दार्शनिक कवियों को ले सकते हैं। ज़िन्दा कौल शायद इस परम्परा के अंतिम कवि थे। इस परम्परा से यह ज्ञात होता है कि आध्यात्मिक ज्ञान के संवाहक के अतिरिक्त साहित्य का दूसरा कोई अर्थ नहीं था।

यहाँ के प्राचीन निवासियों की भाषा संस्कृत थी लेकिन उन्नीसवीं शताब्दी में प्राकृत के प्रादुर्भाव के बाद दार्शनिक चिंतन और आध्यात्मिक उपदेशों के लिए पुरानी शब्दावली को प्रायः छोड़ ही दिया गया।

प्राकृत के प्रादुर्भाव के बाद यहाँ (कश्मीर) की प्राचीन बोलियों और भाषा पर ध्यान कम दिया जाने लगा और अंततः उन्हें सुरक्षित नहीं रखा जा सका। इसलिए भाषा के क्षेत्र में एक धुँधलका-सा, कुहासा-सा छा गया। शोधकर्त्ताओं के लिए यह तय कर पाना कठिन हो गया कि मौलिक और सत्य क्या है।

कश्मीरी भाषा में यह समस्या और विकट हो गयी क्योंकि वह संस्कृत और फ़ारसी के बीच झूलती रही। संस्कृत इस भाषा का वास्तविक आधार थी और फ़ारसी ने इसके सुन्दर स्वरूप का निर्माण किया। यही नहीं, मध्य एशिया की कई भाषाओं और बोलियों से भी कश्मीरी भाषा का संगम होता रहा इसलिए कश्मीरी भाषा का वास्तविक स्वरूप बदलता रहा।

पिछली शताब्दी के अन्त से कश्मीर में अंग्रेजी शिक्षा का जो प्रचार हुआ उसने यहाँ सैलानियों के लिए रास्ता खोल दिया। विश्व के दूसरे स्थानों से सैलानी यहाँ आये और देश के मैदानी इलाक़ों से दर्शनार्थी तथा भ्रमणार्थी यहाँ आने लगे। कश्मीर के प्रति मैदानी इलाकों के लोगों का आकर्षण यहाँ के मौसम, वातावरण और प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण बढ़ा। वे यहाँ की शांति और शीतलता का आनद उठाने यहाँ आने लगे।

क़श्मीर के लोगों ने अंग्रेज़ी पढ़ना-लिखना भी शुरू किया, जिसके निश्चित लाभ भी उन्हें मिले। संस्कृत, फ़ारसी, अरबी और उर्दू जाननेवालों की तुलना में अंग्रेजी जाननेवालों को कई तरह के लाभ मिले।

१. जिन्दा कौल अच्छी अंग्रेजी जानते थे। इस शताब्दी के प्रारंभ से ही उन्होंने अंग्रेज़ी में लिखना शुरू कर दिया था। बाद में उन्होंने कवि परमानन्द की कविताओं का अंग्रेज़ी में अनुवाद भी किया।

२. ज़िन्दा कौल ने चाहे बहुत क्रमबद्ध तरीक़े से फ़ारसी, उर्दू, हिन्दी और कश्मीरी भाषाओं में अपने विचार न व्यक्त किये हों लेकिन इन भाषाओं में उन्होंने जो कुछ और जितना भी लिखा है; उससे उनके व्यापक अध्ययन एवं अभिरुचियों के क्षेत्र का पता लगता है।

३. इमर्सन, विक्टर ह्यूगो, भगवान दास, राधाकृष्णन, ग़ालिब, रूमी, गीता का अनुवाद, उपनिषद्, विल डूरां, नेहरू का 'भारत की खोज'—जैसी प्रसिद्ध पुस्तकों और लेखकों की कृतियों का उनके पास अद्भुत संग्रह था। इन पुस्तकों पर तथा अलग-अलग काग़ज़ों पर भी उन्होंने इन पुस्तकों के अध्ययन के बाद अपनी टिप्पणियाँ और प्रतिक्रियाएँ लिखी थीं। ज़िन्दा कौल की इस अध्ययन पद्धति से उनकी रुचियों और चेतना का पता लगता है।

४. इनके अतिरिक्त अपने मित्रों, सम्बन्धियों और छात्रों से उन्होंने जो पत्राचार (इस पुस्तक के लेखक ने उनका संकलन भी किया है) किया था, उनसे ज़िन्दा कौल का इन लोगों से कैसा सम्बन्ध रहा, यह पता चलता है।

५. ज़िन्दा कौल ने अंग्रेज़ी में मुक्त छन्द में भी कविताएँ लिखीं। प्रोफ़ेसर जे. एल. कौल का कहना है कि ज़िन्दा कौल की ऐसी रचनाएँ दोष मुक्त हैं। अपनी अप्रकाशित जीवनी में भी श्री टी. सी. वज़ीर ने ज़िन्दा कौल की मुक्त छन्द वाली कविताओं का उल्लेख किया है। स्वर्गीय श्याम सुन्दर लाल धर के हम्माम की दीवालों पर ज़िन्दा कौल की कुछ मुक्त छन्द रचनाएँ अंकित भी हैं। श्री वज़ीर ने अपनी जीवनी में इसका विशेष तौर पर उल्लेख किया है।

६. प्रोफ़ेसर जे. एल. कौल ने श्रीनगर कश्मीर, कश्मीर के श्री प्रताप कॉलेज (स्थापित १९३३) में एक 'वाचनालय (रीडिंग क्लब)' की स्थापना की थी। इसके द्वारा उन्होंने छात्रों को प्रोत्साहित किया कि वे कश्मीर के कवियों पर लिखें। इन कवियों की कविताओं के अनुवाद का प्रयास भी किया गया। क्लब में होने वाले वाद-विवाद में ज़िन्दा कौल भी भाग लेते थे। उन्हें एक धार्मिक कवि के रूप में शुमार किया गया।

इस क्लब में कश्मीर के अनेक प्रारम्भिक कवियों का भी अध्ययन किया गया। कॉलेज-पत्रिका 'प्रताप' की शुरुआत भी जे. एल. कौल ने की। पत्रिका के कश्मीरी खंड में कश्मीरी के प्रारम्भिक कवियों के बारे में लेख भी लिखे गये तथा उनका मूल्यांकन भी किया गया।

इस क्लब से कश्मीरी भाषा का संपूर्ण ज्ञान रखनेवाले प्रोफ़ेसर श्रीकण्ठ तोशखानी भी एक प्रकार से सम्बद्ध रहे। उन्होंने कश्मीर की भाषा की समृद्धि पर गंभीर भाषण दिये।

क्लब द्वारा आयोजित इन तमाम प्रयासों से कश्मीर में अध्ययन और विचार का एक नया युग ही शुरू हुआ। श्री जे. एल. कौल की पुस्तक 'कश्मीर

के गीति काव्य' ने तो सबका ध्यान आकर्षित किया । जिन्दा कौल ने इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पुस्तक की संज्ञा दी। कश्मीरी भाषा, साहित्य और विचार-धाराओं के अध्येताओं के लिए यह पुस्तक वास्तव में एक मार्गदर्शक का काम करती है। इसके अंग्रेज़ी अनुवाद के कारण इस पुस्तक का विकास-क्षेत्र और विस्तृत हो गया है।

७. श्रीनगर से प्रकाशित होनेवाली पत्रिका—'लालारूख' (सन् १९५२) में सबसे पहले ज़िन्दा कौल पर एक गंभीर लेख प्रकाशित हुआ। जिसके लेखक थे, ए. एन. रैना । लेख का शीर्षक था—"ज़िन्दा कौल : एक अध्ययन।" इस लेख में ज़िन्दा कौल के जीवन और साहित्य के बारे में जिस प्रकार लिखा गया है उससे लोगों में ज़िन्दा कौल की कृतियों को पढ़ने के प्रति रुचि पैदा हुई।

आकाशवाणी से भी ज़िन्दा कौल की कविताओं पर वार्ताएँ प्रसारित हुईं। इन वार्ताओं से भी ज़िन्दा कौल की कविताओं को समझने में मदद मिलती है और कौल के कवि रूप को समझ पाने में आसानी होती है।

१९५६ में जब साहित्य अकादेमी ने ज़िन्दा कौल को कश्मीरी कविताओं के लिए पुरस्कृत किया तब तो वे कवियों की प्रमुख पंक्ति में ही आ गये। उनके विचार स्पष्ट रूप से लोगों के सामने आये। लोग उनसे प्रभावित हुए।

ज़िन्दा कौल कवि-सम्मेलनों व मुशायरों में भी जाते थे। जहाँ भी वे जाते उनकी सरल भाषा, शुद्ध उच्चारण, और ग़ज़ल कहने के अन्दाज़ से श्रोता गण प्रभावित हो उठते। उनकी भरपूर प्रशंसा होती लेकिन निरतंर गिरते स्वास्थ्य के कारण मुशायरों में उनका आना-जाना कम हो गया। फिर भी महत्त्व-पूर्ण यह था कि ज़िन्दा कौल के एक घनिष्ठ मित्र पंडित सतलाल धर उनकी कविताओं को गा-गा कर सुनाया करते। श्रोता इसे सुनकर मुग्ध हो जाते।

ज़िन्दा कौल की उर्दू और फ़ारसी कविताओं का संग्रह—'दीवान-ए-साबित' का संपादन ए. एन. रैना ने किया था। इस पांडुलिपि को जोश मलीहाबादी सहित उर्दू के कई कवियों और विद्वानों ने भी देखा था। उनका विचार था कि इन कविताओं में क्षेत्रीयता (लोकेल) का रंग बड़ा गहरा है लेकिन इन्हें अवश्य ही प्रकाशित किया जाना चाहिए।

जम्मू कश्मीर की 'सांस्कृतिक और भाषा अकादेमी' ने इस संग्रह के प्रकाशन में आर्थिक मदद दी थी। संकलन की अनेक कविताएँ कश्मीर से प्रकाशित होने वाले प्रथम दैनिक "वितस्ता" में प्रकाशित हुई थी। इस दैनिक के संपादक प्रेमनाथ बजाज ने कश्मीर पर अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे थे। कश्मीर के विद्वानों की श्रेणी में उनका महत्त्वपूर्ण स्थान है।

जम्मू कश्मीर कला संस्कृति और भाषा अकादेमी द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'शीराज़ा' में भी ज़िन्दा कौल की कविताओं पर कई लेख प्रकाशित हुए।

सन्दर्भ-सूची

कौल, जे. एल.	'कश्मीरी साहित्य', प्रसारंग, मैसूर विश्वविद्यालय, १९७०
काव, आर. के.	'आज का कश्मीर' सरकारी मुद्रणालय, श्रीनगर, कश्मीर, अप्रैल १९६०
रैना, ए. एन.	'ज़िन्दा कौल : एक अध्ययन' (लालारुख), श्रीनगर, १९५२, पृष्ठ ४२-५४
रैना, ए. एन.	'दीवान-ए-साबित;' मुस्लिम एजुकेशनल प्रेस, अलीगढ़, (उ० प्र०) १९६४
रैना, ए. एन.	'केसर के फूल' ज्ञान मन्दिर, नयी दिल्ली १९७३, पृष्ठ ९८–१०७
रैना, ए. एन.	'कोशुर समाचार' नयी दिल्ली, पृष्ठ ६–७
रहबर, ए. के.	'शीराज़ा' (श्रीनगर) १९६६
वज़ीर, टी. सी.	'आत्मकथा' (अप्रकाशित) श्रीनगर

मास्टरजी के रूप में प्रसिद्ध पंडित ज़िन्दा कौल (सन् 1884–1966) एक धार्मिक, सरल और संकोची स्वभाव के व्यक्ति थे। उन्होंने अपना जीवन शिक्षण-कार्य में लगा दिया था। आधुनिक काल में भी उन्होंने काश्मीर की धार्मिक काव्य-परम्परा का निर्वाह किया। साहित्य अकादेमी द्वारा पुरस्कृत होने वाले वे पहले कश्मीरी कवि थे। अकादेमी ने उन्हें सन् 1956 में उनकी कविता-पुस्तक 'सुमरन' के लिए पुरस्कृत किया था।

ज़िन्दा कौल ने कश्मीरी, उर्दू, फ़ारसी और हिन्दी में कविताएँ लिखीं। उन्होंने सूफ़ी कवि हाफ़िज़ और रवीन्द्रनाथ ठाकुर के प्रति गहरा आभार व्यक्त किया है। धार्मिक कविताएँ उनके लिए सबसे अधिक प्रिय थीं। उनके धार्मिक विचार संकीर्ण और रूढ़िवादी नहीं थे। 'अस्तित्व की एकता' के लिए वे हर प्रकार के कठमुल्लापन से ऊपर थे।

यह पुस्तक जम्मू और कश्मीर में इतिहास और भूगोल के प्रसिद्ध प्रोफ़ेसर डॉ. अर्जुननाथ रैना ने लिखी है। डॉ. रैना ने काश्मीर के सांस्कृतिक इतिहास और भूगोल पर भी पुस्तकें लिखी हैं। वे संस्कृत, फ़ारसी, हिन्दी, उर्दू और काश्मीरी के विद्वान हैं।

पांच रुपये

आवरण : सत्यजित रे
चित्र : मोहन रैना